विश्वधर्माङ्क

का

परिशिष्टाङ्क

गीताधर्म भजनाङ्क

काशी

संपादक—
पद्मनारायण आचार्य
एम० ए०

संस्थापक—
गीताव्यास लोकसंग्रही
स्वामी विद्यानन्दजी

मई, ३७
वर्ष २ अङ्क ५

श्री कृष्ण गोविन्द हरे मुरारे !
हे नाथ नारायण वासुदेव !

हर हर महादेव शंभो !
काशी विश्वनाथ गङ्गे !

राम रामेति रामेति रमे रामे मनोरमे ।
सहस्रनाम तत्तुल्यं रामनाम वरानने ।

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे !
हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे !

× × × ×

स्वामीजी का संदेश

गीताव्यास स्वामी विद्यानन्दजी ने हरिद्वार से विश्वधर्माङ्क के पाठकों को यह संदेश भेजा है—

परम प्रेमास्पद प्रभु के प्रेमियो !

विश्वधर्माङ्क के लिखने, छापने और पढ़ने का एक ही लक्ष्य है कि हम सब लोग विश्व भर को उसी एक विश्वनाथ की एक रचना समझें। इस विश्व की सभी चीजों में एकता का अनुभव करें। विश्व में फैले हुए नाना धर्मों और मतों के बीच में रहने के साथ साथ एक पवित्र धर्मभाव को अपनावें।

यद्यपि देश, काल और पात्र के अनुसार धर्म, मत तथा आचार विचार में भेद होना साधारण बात है, पर यदि हम व्यापक और उदार दृष्टि से विश्व को देखा करें और ईश्वर में विश्वास रखें, तो भेद रहते हुए भी हम मेल और मैत्री का भाव रख सकते हैं। इस प्रकार ऐक्य और सर्वभूतहितरति की भावना बढ़ते बढ़ते एक दिन हमें उस परम अवस्था में पहुँचा देगी जिसे मोक्ष कहते हैं।

तत्र को मोहः कः शोकः एकत्वमनुपश्यतः ।

इस प्रकार विश्वधर्माङ्क का लक्ष्य है--

१. मोक्ष प्राप्त करना ।
२. विशाल विश्व में एक भगवान को देखना ।
३. सभी धर्मों मे एकता के तत्त्व का अनुभव करना ।

हरि ॐ तत्सत

वार्षिक मूल्य
भारत मे ४) रू०, विदेश में ६॥)

एक प्रति
भारत में ।=), विदेश में ॥=)

विषयसूची

चित्रसूची

सरस्वती के मूल्य में कमी

'सरस्वती' के वार्षिक मूल्य में २) की कमी हो गई है। इसलिए पुराने ग्राहकों से, जिनका चंदा दिसंबर सन् १९३६ से समाप्त होता है—और जनवरी सन् १९३७ से 'सरस्वती' के नये ग्राहक बननेवालों से भी निवेदन है कि वे सिर्फ ४।।) उसका वार्षिक मूल्य भेजें। जिनका वार्षिक मूल्य ६।।) आ चुका है उनका अधिक चंदे का हिसाब दुबारा वी० पी० भेजते समय ठीक कर दिया जायगा।

इंडियन प्रेस, लि०
प्रयाग।

मैनेजर, 'सरस्वती'

गीताधर्म के नियम

१—गीताधर्म प्रतिमास की पूर्णिमा को प्रकाशित होता है।

२—इसका वार्षिक मूल्य ४) मात्र है। इसका वर्ष मार्गशीर्ष से कार्तिक तक समझा जाता है। छः मास का मूल्य २।) रुपया है, परंतु छः मासवाले ग्राहकों को वार्षिक बड़ा विशेषाङ्क नहीं मिलेगा। प्रतिसंख्या का मूल्य ।≈) है। नमूने के लिए ।≈) आने का टिकट भेजना चाहिए। भारत के बाहर सर्वत्र वार्षिक मूल्य ६।।) और प्रतिसंख्या का ।≡) है।

३—अपना नाम और पूरा पता साफ साफ लिखकर भेजना चाहिए, जिसमें पत्र के पहुँचने में गड़बड़ी न हो।

४—जिन सज्जनों को किसी मास का गीताधर्म न मिले उन्हें पहले अपने डाकघर से पूछना चाहिए। पता न लगने पर डाकघर के उत्तर के साथ जिस महीने की संख्या न मिली हो उसके अगले महीने की कृष्ण एकादशी तक पत्र लिखें। जिन पत्रों के साथ डाकघर का उत्तर न होगा उनपर विचार करना कठिन होगा। गीताधर्म यहाँ से दो बार अच्छी तरह जाँचकर रवाना किया जाता है। पत्रव्यवहार करते समय अपना **ग्राहकनंबर अवश्य लिखा जाय।**

५—पत्र के उत्तर के लिए सदा **जवाबी कार्ड अथवा टिकट** आना चाहिए, अन्यथा हम उत्तर देने में असमर्थ हैं।

६—यदि एक ही दो मास के लिए पता बदलवाना हो तो अपने डाकखाने से उसका प्रबन्ध करा लेना चाहिए। यदि सदा अथवा अधिक काल के लिए पता बदलवाना हो तो उसकी सूचना हमें अवश्य देनी चाहिए।

७—लेख, कविता, समालोचना के लिए पुस्तकें (२ प्रति से कम नहीं) और बदले के पत्र "संपादक 'गीताधर्म', साक्षीविनायक, काशी" के पते से भेजना चाहिए। मूल्य तथा प्रबन्ध संबन्धी पत्र "मैनेजर 'गीताधर्म', साक्षीविनायक, काशी" के पते से आने चाहिएँ।

८—किसी लेख अथवा कविता के प्रकाशित करने या न करने का तथा उसे लौटाने या न लौटाने का पूरा अधिकार संपादक को होगा। लेखों के घटाने-बढ़ाने का अधिकार भी संपादक को है।

९—लेख, कविता एवं कहानियों का सरल भाषा में धर्म के अनुकूल तथा हाशिया छोड़कर पृष्ठ के एक ही ओर स्पष्ट लिखित होना आवश्यक है। अधूरे या धर्मविरुद्ध लेख नहीं छापे जायँगे। जिन लेखों में चित्र रहेंगे, वे तब तक न छापे जायँगे जब तक लेखक उनके मिलने का प्रबन्ध न कर देंगे।

कुछ ध्यान देने योग्य आवश्यक

सूचनाएँ

प्रार्थना

(१) गीतापति भगवान् कृष्ण के अनुग्रह से लोकसंग्रही स्वामी विद्यानन्दजी के द्वारा गीताधर्म पत्र की स्थापना हो गई है। महात्मा और महापुरुष आशीर्वाद दे रहे हैं, भक्त और प्रेमी ग्राहक और संरक्षक बन रहे हैं। अनेक वृद्ध, युवा और बालक मिलकर इस पत्र की सेवा कर रहे हैं। अपने अपने ढंग से सभी लोग इस ज्ञानयज्ञ में भाग ले रहे हैं।

हमारी प्रार्थना है, आप भी इस **मासिक यज्ञ** में सहायता कीजिए। 'गीताधर्म' मासिक यज्ञ है।

गीताधर्म का लक्ष्य है आत्मकल्याण और लोकसंग्रह। इससे गीताधर्म के ग्राहक बनकर, ग्राहक बनाकर और अन्य उचित उपायों से गीताधर्म का प्रचार करके इस लक्ष्य की पूर्ति करना आपका कर्तव्य है।

'गीताधर्म' भगवान् का पत्र है। इसकी सेवा भगवान् की सेवा है।

प्रत्येक गीताधर्मप्रेमी से यह अनुरोध है कि जैसे आप स्वयं ग्राहक बने हैं वैसे ही प्रत्येक महीने में औरों को भी ग्राहक बनावें।

(२) **गीताव्यास लोकसंग्रही स्वामी विद्यानन्दजी** का पता गीताधर्म कार्यालय से पूछिए।

(३) **रुपया किसे देना ?**—'गीताधर्म' की शाखाओं तथा प्रचारकों का नाम अन्त में दिया रहता है। ग्राहकों से प्रार्थना है कि वे इनको छोड़कर और किसी सज्जन को रुपये न दें। यदि उन्हें ग्राहक अथवा संरक्षक बनना हो तो रुपये मनीआर्डर से सीधे कार्यालय को भेज दें।

(४) हमारी समिति ने यह निश्चय किया है कि संस्कृत विद्या, भारतीय संस्कृति तथा साहित्य से संबन्ध रखनेवाले ग्रन्थ प्रकाशित किये जायँ और इस ग्रन्थमाला का नाम रहे **'विद्यानन्द ग्रन्थमाला'**। ग्रन्थमाला के ग्रन्थों की सूची अन्यत्र पढ़िए।

(५) दो विशाल **विशेषाङ्क**—(१) विश्वधर्माङ्क और (२) गीताङ्क।

(६) प्रश्नोत्तर—जिज्ञासु लोग प्रश्न भेजते हैं; हम गुरुजनों से पूछकर उनके उत्तर भेजने का यत्न करते हैं। काशी के प्रसिद्ध गीता के आचार्य श्री गीतानन्दजी ने यह वचन दिया है कि कोई भी जिज्ञासु हमसे गीता पर प्रश्न करे, उसका उत्तर यथाशक्ति अवश्य देंगे। तत्त्वबोध और सत्संग का यह अपूर्व अवसर है।

(७) पत्रव्यवहार—अँगरेजी या हिंदी में ही रहना चाहिए और जो लोग उत्तर चाहें उन्हें टिकट अथवा जवाबी कार्ड भेजना चाहिए।

(८) गुड्स रेलवे स्टेशन बनारस कैंट पर भेजना चाहिए।

(९) पार्सल बनारस टाउन के पते से भेजना चाहिए।

(१०) उलहना—कृपालु ग्राहक पत्रिका न मिलने पर शीघ्र पोस्ट में अथवा अपने स्थान के शाखाकार्यालय में जाँचकर, हमें न मिलने का उलहना पत्र द्वारा दिया करें।

मैनेजर—

'गीताधर्म', काशी

(भारत के प्रसिद्ध शहरों में गीताधर्म कार्यालय की शाखाएँ)

गीताधर्म मिलने के पते

१ **काशी,** (क) गीताधर्म कार्यालय, साक्षीविनायक। (ख) गीताधर्म कार्यालय, भदैनी।
(ग) विद्यामन्दिर कार्यालय, पाण्डेघाट, (घ) श्री शिवनारायण बी. ए., अर्दली बाजार।

२ **प्रयाग,** पं० वृषकेतु उपाध्याय, जार्जटाउन ३४ (चड्ढा साहब का बँगला)

३ **बंबई,** श्री नगीनदास फूलचंद चिनाई, चिनाई बिल्डिंग, मसजिद बंदररोड।

४ **कलकत्ता,** श्री सेठ रामप्रसादजी मूँदरा ३२, क्रासस्ट्रीट मूँगापट्टी कलकत्ता M. P.

५ **अहमदाबाद,** सेठ बद्रीप्रसाद, कामनाथ महादेव, रायपुर दरवाजा बाहर।

६ **बड़ोदा,** मणिभाई जशभाई, कंसारा की बाड़ी, मांडवी रोड।

७ **इंदौर,** हीरालाल पन्नालाल, न्यू क्लाथ मारकेट।

८ **इंदौर,** श्री कमलाशंकर जे. पंड्या M. B. E H. प्राइवेट मेडिकल प्रेक्टीशनर, पीपली बाजार।

९ **ग्वालिअर,** बाबू उमराव बिहारी माथुर, अम्बानिवास नौमहला।

१० **नागपुर,** लाला नन्दलाल मैकूलाल (किराना मर्चेंट), सीतावर्डी।

११ **जबलपुर,** सेठ रामकुमार, लार्डगंज।

१२ **जबलपुर,** लाला रामचन्द्र, रईस व ठेकेदार, मुकादमगंज।

१३ **गाडरवारा,** आचारीजी का मन्दिर।

१४ **नरकटियागंज (चंपारन),** पण्डित राधावल्लभ मिश्र, अध्यापक जानकी संस्कृत विद्यालय।

१५ **जमशेदपुर,** एम. एल. तिवारी, तिवारी बेचर एंड कं० लिमिटेड।

१६ **लाहौर,** सेठ शालिग्राम नरसिंहदासजी, लाहौर कैंट।

१७ **लखनऊ,** श्री नन्दबिहारीलाल ओरियंटल ग० सिक्यूरिटी लाइफ इंश्योरेंस कं० लि०,
ओरियंटल बिल्डिंग, हजरतगंज।

१८ **डभोई,** सेठ चुन्नीलाल गिरधरलाल जीनवाला।

१९ **सनखेड़ा,** बक्षी जेठालाल केशवलालजी, बजारमां (बड़ौदा)।

२० **आनन्द,** पटेल गोरधनभाई शामलदासजी मास्तर।

२१ **उदयपुर,** अक्षयकीर्ति शर्मा 'अक्षय', सुपरिंटेंडेंट मेवाड़ आफ कोलाजी विक्टोरिया हाल म्युजियम, (राजपूताना) ।

२२ **उज्जैन,** पं० दुर्गाप्रसादजी तिवारी, लेफ्टीनेंट, माधवनगर ।

२३ **सिहोरा,** श्री दयाप्रसाद वर्मा, लोकल बोर्ड सेक्रेटरी, सिहोरा रोड ।

२४ **गाजीपुर,** श्री शिवमूर्ति पाण्डेयजी, भगवती औषधालय, धानापुर ।

२५ **बालाघाट,** गोस्वामी श्री दयालगिरिजी, ज्वाइंट सेक्रेटरी-गीताप्रचारमण्डल, कर्णकुटी ।

२६ **महेसाणा,** माधवलाल डी० शाह (स्टेट बडौदा)

२७ **कानपुर,** श्रीमान् बाबू गङ्गानारायण खरे, म्युनिसिपल हाईस्कूल, नवाबगंज ।

२८ **दिल्ली,** श्रीमान् पं० गोविन्दचन्द्र पाण्डेय बी० ए०, सेक्रेटरी आल इंडिया ब्राह्मणमहासभा तथा वर्णाश्रम स्वराज्य संघ, २३०३ चरखेवालान स्ट्रीट, कूचा बीबीगोहर ।

२९ **सिन्ध,** मेसर्स बेरहामल नन्दरामजी, न्यू अंडरपीस गुड्समर्चेंट, शिकारपुर ।

३० **हैदराबाद,** श्रीमान् गोपीकिशनजी C/o सेठ सीतारामजी रामगोपालजी माता नी नगारखाना, बेगमबाजार, हैदराबाद (दक्षिण) ।

३१ **पादरा,** श्रीमान् जेठालाल मनसुखरामजी, कापड़ नी दुकान, बजारमां ।

३२ **पेटलाद,** श्रीमान् काछिया मोतीभाई जेठालाल, एजेंट पेटलाद बुक्सेलर, ठे० बड़कुवां पासे ।

३३ **रतलाम,** मनबोधनलाल संकठाप्रसाद पाण्डेय, असिस्टेंट ट्राफिक कन्ट्रोलर B. B. & C. I. ry.

३४ **आजमगढ़,** पं० श्रीधर उपाध्याय, कुर्मीटोला ।

३५ **हरिद्वार,** मैनेजर, महारानी अहिल्याबाई बाड़ा ।

३६ **जैपुर,** श्रीमान् लक्ष्मीशरण गङ्गाशरणजी माथुर, जड़ियो का रास्ता, जैपुर सिटी ।

३७ **भुज (कच्छ),** श्रीमान् महेता यशश्चन्द्रभाई मोतीभाई, ज्वाइंट प्राइवेट सेक्रेटरी ।

३८ **आफ्रीका,** Gordhan Bhai Soma Bhai Patel, The Indian School, Saba Saba P. O. MARAGUA, (Kenya Colony) British East Africa.

39 Fiji (Island)—S. B. Patel, Bar-at-Law, Lauutka.

40 Mombasa—Purashottam D. master, P. 274 British East Africa.

41 Java—Natwarlal Govardhandas Parikh Messers Chandulal & Co., 4, Gang Gipo, Survaya.

42 Japan—Messers R. C. Patel & Co., P. N. 339 Kove.

४३ **बलिया,** पं० श्यामसुन्दरजी उपाध्याय B. A , L-L. B. , सेक्रेटरी डिस्ट्रिक्ट बोर्ड ।

४४ **लहेरियासराय,** श्री विश्वनाथनारायण सिंह, B. A L-L. B. (दरभंगा) ।

४५ **बाँकीपूर,** वैद्यरत्न पं० व्रजबिहारी चतुर्वेदी, रत्नाकर औषधालय, भिखना पहाड़ी, पटना ।

४६ **महादेवपारा,** वसिष्ठनारायण त्रिपाठी, मु० महादेवपारा, पो० मेहनगर, आजमगढ़ ।

४७ **प्रतापगढ़,** पं० रविदत्त पाण्डेय B. A. L. T., असिस्टेंट मास्टर, अजीत सोमवंशी हाईस्कूल, प्रतापगढ़ सिटी (अवध) ।

४८ **अमृतसर,** गोस्वामी जीवनदास, महामन्त्री–पंजाब प्रान्तीय वर्णाश्रम स्वराज्य संघ, दुरगियाना, अमृतसर (पंजाब) ।

४९ **करांची,** रतीलाल नरवेजी, कोटक, प्रागजी दामजी बिल्डिंग, प्रिंसेस स्ट्रीट, नन्दकुवादा ।

५० **रांची,** गुलाबनारायण शर्मा, तिवारी महल्ला ।

५१ **गोरखपुर,** श्री हरिश्चन्द्रपति त्रिपाठी बी. ए., एल-एल. बी. बेतिया हाता ।

५२ **बगहा,** पं० रामसागर मिश्र हेड पण्डित D M. एकडमी, पो० बगहा, चंपारन ।

५३ **बाराशीवनी,** सेठ चौथमलजी, बालाघाट, सी. पी. ।

५४ **कलकत्ता,** जयदेव गङ्गाराम, १४।१ रूपचंदराय स्ट्रीट ।

५५ **जौनपुर,** श्रीराम उपाध्याय B. A., L-L. B. एडवोकेट, महल्ला—जोगियापुर ।

५६ **छिंदवाड़ा,** प्रधानाध्यापक हरिप्रसाद द्विवेदी आ० शास्त्री श्री सनातनधर्म संस्कृतविद्यालय, सिवनी, (श्री राममन्दिर के पास) (सी० पी०) ।

५७ **मुहम्मदाबाद,** पं० कुबेरनाथ पाण्डेय, हेडमास्टर अपर प्राइमरी स्कूल, जि. गाजीपुर ।

५८ **गोधरा,** धी आशाभाई खुशालभाई, श्रीकृष्ण आयल मिल्स कं० (गुजरात) ।

५९ **अकोला,** सेठ जगन्नाथ सीताराम विसनदयाल की फर्म, झोपड़ाबाजार में ।

भजनाङ्क

गीता धर्म

संस्थापक—
गीताव्यास लोकसंग्रही
स्वामी विद्यानन्द

वर्ष २ | अङ्क ५

संपादक—
पद्मनारायण आचार्य
एम० ए०

मई, १९३७
काशी

संपादकीय सूचना

१. **धर्म** का जीता जागता रूप है भजन। भजन ही धर्म का प्राण है। इसी से विश्वधर्माङ्क को पूर्ण करने के लिए इस भजनाङ्क की आवश्यकता थी।

हरि अनन्त, हरि कथा अनन्ता। विचारकर देखें तो भजनाङ्क बहुत बड़ा हो सकता था, पर यहाँ तो जितना समय और स्थान मिलता है उतनी ही सेवा हम कर पाते हैं।

२. **पहला चित्र** इस अङ्क में है राधा का। उसका सलोना और रसभरा वर्णन किया है भक्तप्रवर कवि मैथिलीशरणजी ने। जिन्हें इस काव्यमय वर्णन और व्याख्या के सिवाय और भी अधिक स्पष्ट जानना हो वे कृष्णाङ्क में निकले 'नवनीत' और श्री अरविन्द की व्याख्या पढ़ने का कष्ट करें।

राधा हैं भगवद्भजन का साकार रूप। भगवदाराधन का ऐसा श्रृङ्गारपूर्ण चित्र देखकर कौन तल्लीन न हो उठेगा! भारत के कवि और योगी सभी एक स्वर से राधा की उपासना करते हैं—इसपर विचार करिए और चित्र का दर्शन करिए।

३. **पाँच भजन** देने का हमारा विचार था—१ गणेश, २ सूर्य, ३ शिव, ४ शक्ति और ५ विष्णु की स्तुतियाँ। ये ही पाँच हिंदुओं के मुख्य देव हैं। गणेश तो हमारी हर एक पूजा में आते

हैं, सूर्य की संध्या में नित्य उपासना होती है, शिव के लिए शिवमहिम्न, दुर्गा के लिए दुर्गासप्तशती का चतुर्थ अध्याय (शक्रादि स्तुति) और विष्णु के लिए गीता एकादश अध्याय का पाठ करना चाहिए। यही हमने संतो महात्माओं से सीखा है। यदि कभी अवसर मिला, तो हम अपने विचार और अनुभव भी लिखेंगे। तब तक आप स्वयं जितना बने करके देखिए। भजन तो भजकर देखने की चीज है।

४. **सर्वश्रेष्ठ भजन** कौन सा है ? बड़ा छोटा सा, बड़ा मीठा उत्तर है--

राम

× × × × ×

राम राम रमु, राम राम रटु, राम राम जपु जीहा।
राम नाम नव नेह मेह को मन ! हठि होहि पपीहा॥

× × × × ×

'राम जपु'

राम जपु, राम जपु, राम जपु, बावरे !
घोर भव नीर निधि नाम निज नाव रे॥ १॥
एकै साधन सब रिद्धि सिद्धि साधि रे।
ग्रसे कलि रोग जोग संजम समाधि रे॥ २॥
भलो जो है, पोच जो है, दाहिनो जो, बाम रे।
राम नाम ही सों अन्त सबही को काम रे॥ ३॥
जग नभबाटिका रही है फल फूलि रे।
धुआँ कै सौ धौरहर देखि तू न भूलि रे॥ ४॥
राम नाम छाँडि जो भरोसो करै और रे।
तुलसी परोसो त्यागि माँगै कूर कौर रे॥ ५॥

(ऐसी और भी दुर्लभ विनय और स्तुतियों का भजन करना हो, तो तुलसी की विनयपत्रिका पास में रखिए।)

राधा

१

शरण एक तेरे मैं आई,
धरे रहे सब धर्म हरे!
बजा तनिक तू अपनी मुरली,
नाचें मेरे मर्म हरे!
नहीं चाहती मैं विनिमय में,
उन वचनों का वर्म हरे!
तुझको, एक तुझी को अर्पित,
राधा के सब कर्म हरे!

× × ×

२

झुक, वह वाम कपोल चूम ले,
यह दक्षिण अवतंस हरे!
मेरा लोक आज इस लय में,
हो जावे विध्वंस हरे!
रहा सहारा इस अंधी का,
बस, यह उन्नत अंस हरे!
मग्न अथाह प्रेमसागर में,
मेरा मानसहंस हरे!

—(कविवर मैथिलीशरण)

सर्वधर्मपरिषद् की प्रार्थना*

संगच्छध्वं संवदध्वं ।
सं वो मनांसि जानताम् ॥
समानो मन्त्रः समितिः समानी ।
समानं मनः सहचित्तमेषाम् ॥
समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः ।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति ॥

—ऋग्वेद

× × ×

१ एक साथ चलो, एक साथ बोलो, एक साथ तुम्हारे मन सोचें समझें।
(अर्थात् कायेन, वाचा और मनसा सभी प्रकार से आप लोग एक साथ रहो ।)

२ मन्त्र एक हो, समिति एक हो, इनका मन भी चित्त के साथ ही एक हो ।
(अर्थात् जो कुछ करो सोच समझकर एक होकर एक मन से करो ।)

३ जिस प्रकार आप लोगों का सुन्दर साथ हो गया है (इस संसार और समाज में एक साथ जन्म हुआ है) उसी प्रकार आप लोगों का संकल्प एक हो, हृदय एक हो और मन एक हो । इसी एकत्व का संदेश भारत के सभी ऋषियों, मुनियों और आचार्यों ने दिया है ।

Walk in unison, speak in unison. let your minds be of one accord.

Let your words be common, common the place of assembly, common the mind with thoughts united. May same be your cry, your resolve the same, may your hearts be united bearing happily with one another.

---

* यह वैदिक प्रार्थना मनन करने लायक है । संसार की सबसे पुरानी और सबसे अच्छी प्रार्थना है । ऋग्वेद के ऋषियों की सबसे अन्तिम कामना भी यही है । अभी कल ता० १ मार्च, १९३७ को होनेवाली सर्वधर्मपरिषद् में भी यही प्रार्थना गाई गई थी ।

हमें इसमें एक बातपर विशेष ध्यान देना चाहिए । वह है मन का महत्त्व । भजन, पूजन, व्रत, विधान आदि सबमें मन ही मुख्य है । जहाँ मन ठिकाने आया कि सब ठीक हुआ ।

यही मनोयोग और मनःसंयम का उपदेश ऋग्वेद का है, यही कृष्ण की गीता का उपदेश है, और यही है उपदेश बुद्ध के धम्मपद का । —सं०

सनातनधर्मी हिंदुओं की प्रार्थना*

देववन्दना

यं ब्रह्मावरुणेन्द्ररुद्रमरुतस्तुन्वन्ति दिव्यैः स्तवै-
र्वेदैः साङ्गपदक्रमोपनिषदैर्गायन्ति यं सामगाः ।
ध्यानावस्थिततद्गतेन मनसा पश्यन्ति यं योगिनो
यस्यान्तं न विदुः सुरासुरगणा देवाय तस्मै नमः ॥

जिसकी ब्रह्मा, वरुण, इन्द्र, रुद्र, और मरुत् दिव्य स्तोत्रों से स्तुति करते हैं, जिसका साम गानेवाले अङ्ग, पद, क्रम सहित वेदों तथा उपनिषदों के द्वारा गान करते हैं, जिसका योगी लोग ध्यानावस्थित और तन्मय मन से दर्शन करते हैं और जिसका देव और असुर (कोई भी) अन्त (१–असली रहस्य, २–पार) नहीं पाते, उस देव को नमस्कार है ।

(एक बार मालवीयजी ने कथा में कहा था कि इससे बढ़कर दूसरी कोई देवस्तुति नहीं है ।)

हरिवन्दना

यं शैवाः समुपासते शिव इति ब्रह्मेति वेदान्तिनो
बौद्धाः बुद्ध इति प्रमाणपटवः कर्तेति नैयायिकाः ।
अर्हन्नित्यथ जैनशासनरताः कर्मेति मीमांसकाः
सोऽयं नो विदधातु वाञ्छितफलं त्रैलोक्यनाथो हरिः ॥

जिसकी शैव लोग शिव मानकर उपासना करते हैं, जिसे वेदान्ती ब्रह्म मानते हैं, बौद्ध जिसे बुद्ध मानते हैं, जिसे प्रमाणपटु नैयायिक कर्ता मानते हैं, जैन लोग जिसे अर्हत् मानते हैं, मीमांसक जिसे कर्म मानते हैं, वही तीनों लोकों के मालिक हरि (१ घटघट व्यापी, २ विष्णु, ३ सूर्य, ४ जगदीश्वर) हमारे लिए मन चाहे फल को बनावें (और देवें) ।

मुनिवन्दना

यं प्रव्रजन्तमनुपेतमपेतकृत्यं
द्वैपायनो विरहकातर आजुहाव ।
पुत्रेति तन्मयतया तरवोऽभिनेदु-
स्तं सर्वभूतहृदयं मुनिमानतोऽस्मि ॥

बालरूप शुकदेव को नमस्कार ! उन मुनि को नमस्कार, जो सभी प्राणियों के हृदय हैं, जिनके पास कोई पहुँच नहीं सका (अर्थात् जिन्होंने किसी को पास फटकने भी नहीं दिया, संसार जिनके पास पहुँच भी नहीं सका), जिनका कोई भी कृत्य बाकी नहीं बचा था , और जिनके घर से (विरक्त होकर) भागने पर (स्वयं) कृष्णद्वैपायन व्यास भी विरह से कातर होकर चिल्ला उठे थे—पुत्र ! पुत्र !

---

* इसे हम सभी हिंदुओं की प्रार्थना कह सकते हैं । क्योंकि यह प्रार्थना कोई भी हिंदू (किसी भी संप्रदाय और मत का व्यक्ति) कर सकता है और हिंदू-विश्वविद्यालय जैसे स्थानों में ऐसी प्रार्थना होती भी है । ऐसे तो हिंदुओं के कई अन्य संप्रदायों की—जैसे बौद्ध, जैन, सिक्ख, वैष्णव आदि की—अलग अलग प्रार्थनाएँ भी हमने आगे दी हैं । —सं०

तन्मयता के कारण जिन्हें वृक्ष भी पुकारकर कह उठे थे—पुत्र ! पुत्र ! उन्हीं सर्वभूत हृदय को मेरा नमन !

विश्ववन्दना

(अर्थात् विश्वरूप की वन्दना)

विष्णुसहस्रनाम

नमोऽस्त्वनन्ताय सहस्रमूर्तये
सहस्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे ।
सहस्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते
सहस्रकोटीयुगधारिणे नमः ॥
नमः कमलनाभाय नमस्ते जलशायिने ।
नमस्ते केशवानन्त वासुदेव नमोऽस्तुते ॥
वासनात् वासुदेवस्य वासितं भुवनत्रयम् ।
सर्वभूतनिवासोऽसि वासुदेव नमोऽस्तुते ॥
नमो ब्रह्मण्यदेवाय गोब्राह्मणहिताय च ।
जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः ॥
आकाशात् पतितं तोयं यथा गच्छति सागरम् ।
सर्वदेवनमस्कारः केशवं प्रति गच्छति ॥

विष्णुसहस्रनाम की प्रशंसा सभी बड़े लोगों ने की है, आजकल के युग में मालवीयजी और गांधीजी ने भी उसका महत्त्व माना है ।

ये पाँच श्लोक उसी विष्णुसहस्रनाम के नवनीत हैं। जिस प्रकार पुरुषसूक्त में ऋग्वेद का निचोड़ आ जाता है उसी प्रकार इन पाँच श्लोकों में विष्णुसहस्रनाम का सार तत्त्व आ गया है। इनके पाठ और मनन से भगवान् के विश्वरूप का दर्शन होता है और विश्व की सभी चीजें सुलभ हो जाती हैं।

गीत

(ले०—श्री सोहनलाल द्विवेदी बी० ए०, एल-एल० बी०)

[बागेश्वरी ३ ताल]

रसना रामनाम रट री !
रामनाम अमृत से पूरण कर अन्तस् घट री !
भक्तिभाव का पहिर मनोहर पीताम्बर पट री,
जीवन तरी लगे लहराती भवसागर तट री !

रसना० ....

जैनियों की प्रार्थना

(१)

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरीयाणं।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ॥
चत्तारि मंगलं, अरहंत मंगलं, सिद्धमंगलं, साहुमंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं।

चत्तारि लोगुत्तमा, अरहंत लोगुत्तमा, सिद्ध लोगुत्तमा, साहु लोगुत्तमा, केवलि पण्णतो धम्मो लोगुत्तमा । चत्तारिसरणं पवज्जामि, अरहंत-सरणं पवज्जामि, सिद्धसरणं पवज्जामि, केवलि-पण्णत्तो धम्मो शरणं पवज्जामि।

ॐ नमोऽर्हते ॥

भावार्थ—अरहंतों को नमस्कार हो, सिद्धों को नमस्कार हो, आचार्यों को नमस्कार हो, उपाध्यायों को नमस्कार हो, लोक के सर्वसाधुओं को नमस्कार हो।

इस लोक में चार मङ्गलस्वरूप हैं—अरहंत, सिद्ध, साधु तथा केवल भगवान् के द्वारा कहा गया धर्म।

चार ही लोक में उत्तम हैं—अरहंत, सिद्ध, साधु तथा केवलि भगवान् द्वारा प्रणीत धर्म।

मैं इन चारों की शरण को प्राप्त होता हूँ। अरहंत की शरण को प्राप्त होता हूँ। सिद्ध की शरण को प्राप्त होता हूँ। साधु की शरण को प्राप्त होता हूँ। केवलि भगवान् के द्वारा कहे गये धर्म की शरण को प्राप्त होता हूँ।

(२)

अरिहंत नमो भगवंत नमो परमेश्वर जिनराज नमो।
प्रथम जिनेश्वर प्रेमे पेखत सिद्धं सघला काज नमो॥
प्रभु पारंगत परम महोदय अविनाशी अकलंक नमो।
अजरअमर अद्भुत अतिशय निधिप्रवचन जलधिमयंक नमो॥
सिद्ध बुद्ध तूँ जगजन सजन नयनानन्दन देव नमो।
सकल सुरासुर नरवर नायक सारे अहो निश सेव नमो॥
तू तीर्थंकर सुखकर साहिब तू निःकारण बन्धु नमो।
शरणागत भविने हितवत्सल तुँ ही कृपारससिन्धु नमो॥
केवल ज्ञानादर्शे दर्शित लोकालोक स्वभाव नमो।
नाशित सकल कलङ्क कलुषगण दुरित उपद्रव भाव नमो॥
जगचिन्तामणि जगगुरु जगहित कारक जगजन नाथ नमो
घोर अपार भवोदधितारण तूँ शिवपुरणो साथ नमो॥
अशरण शरण विराग निरञ्जन निरुपाधिक जगदीश नमो।
बोध दीनुं अनुपम दानेसर ज्ञानविमल सुरीश नमो॥

सबसे प्राचीन भजन का ग्रन्थ

ऋग्वेद

बौद्धों की प्रार्थना

नमो तस्स भगवतो अरहतो संमासंबुद्धस्स ।
नमो तस्स भगवतो अरहतो संमासंबुद्धस्स ।
नमो तस्स भगवतो अरहतो संमासंबुद्धस्स ।
बुद्धं सरणं गच्छामि । धम्मं सरणं गच्छामि ।
संघं सरणं गच्छामि ।

दुतियंपि बुद्धं सरणं गच्छामि ।
दुतियंपि धम्मं सरणं गच्छामि ।
दुतियंपि संघं सरणं गच्छामि ।
ततीयंपि बुद्धं सरणं गच्छामि ।
ततीयंपि धम्मं सरणं गच्छामि ।
ततीयंपि संघं सरणं गच्छामि ।

पाणातिपाता वेरमणी सिक्खापदम् समादियामि ।
अदिन्नादाना वेरमणी सिक्खापदम् समादियामि ।
कामेसु मिच्छाचारा वेरमणी सिक्खापदम् समादियामि ।
मुसावादा वेरमणी सिक्खापदम् समादियामि ।
सुरा मेरय मज्जा पमा दट्ठाना
वेरमणी सिक्खापदम् समादियामि ।

'पूर्ण प्रज्ञ, अर्हन्, भगवान् (बुद्ध) को नमस्कार हो। पूर्ण प्रज्ञ, अर्हन्, भगवान् (बुद्ध) को नमस्कार हो। पूर्ण प्रज्ञ, अर्हन्, भगवान् (बुद्ध) को नमस्कार हो। मैं बुद्ध की शरण में जाता हूँ, धर्म के शरणापन्न होता हूँ, संघ की शरण में जाता हूँ। द्वितीय बार मैं बुद्ध के शरणापन्न होता हूँ, धर्म की शरण में जाता हूँ, संघ की शरण में जाता हूँ। तीसरी बार मैं बुद्ध के शरणापन्न होता हूँ, धर्म की शरण में जाता हूँ, संघ की शरण में जाता हूँ।' 'मैं जीव की हिंसा न करने की प्रतिज्ञा करता हूँ। मैं उस वस्तु के न लेने की प्रतिज्ञा करता हूँ, जो मुझे न दी गई हो। कामनाओं में मिथ्याचरण न करने की मैं प्रतिज्ञा करता हूँ। असत्य वचन से बचने की मैं प्रतिज्ञा करता हूँ। मैं सुरा मद्यादि मादक वस्तुओं से बचने की प्रतिज्ञा करता हूँ।'

सिक्खों की प्रार्थना

एक ओं सतनाम कर्तापुरुष निर्भउ निर्वैर
अकाल मूरत अजूनी सैभं गुरुप्रसाद जप ।
आदि सच जुगादि सच है भी सच
नानक होसी भी सच ।। वाह गुरू ।।

ईसाइयों की प्रार्थना

Almighty God! unto whom all hearts be open, all desires known, and from whom no secrets are hid; cleanse the thoughts of our hearts by the inspiration of Thy Holy Spirit, that we may perfectly love Thee, and worthily magnify Thy Holy name Through Christ, our Lord. Amen.

सर्वशक्तिमान् प्रभु जो सबके हृदय को देखते हैं, सबकी अभिलाषाओं को जानते हैं और जिनसे कोई भी भेद छिपा नहीं है, अपने दिव्य आत्मा की प्रेरणा से हमारे हृदय के विचारों को शुद्ध करें, जिससे हम प्रभु से पूर्णतः प्रेम करें तथा प्रभु के पवित्र नाम की महिमा यथार्थतः बढ़ावें। अपने प्रभु यीशू-मसीह के द्वारा। आमीन्।

O Lord Christ! we Thy faithful soldiers dedicate this new-born day to Thee, praying that it may shine in Thy service as a pure pearl in the chaplet of our life, O Thou Great King of Love, to whom be praise and adoration for evermore. Amen.

हे प्रभु यीशू! हम तुम्हारे भक्त सैनिक इस नवजात दिवस को तुम्हें समर्पित करते हैं और प्रार्थना करते हैं कि यह हमारे जीवनरूपी माला में शुद्ध मुक्ता के समान तुम्हारी सेवा में प्रकाशित होवे। हे प्रेम के अधिराजा, तुम्हारी स्तुति और पूजा सदा सर्वदा होती रहे। आमीन्।

Teach us, O Lord! to see Thy life in all men and in all the peoples of Thine earth, and guide our Nation through its leaders to preserve Thy peace, that the menace of war be far from our days. Through Christ our Lord. Amen.

हे प्रभो! हमें शिक्षा दो कि सब मनुष्यों में तथा तुम्हारी पृथिवी के समस्त देशों में तुम्हारे जीवन को देखें, तथा हमारे राष्ट्र को इसके नेताओं के द्वारा अपनी शान्ति को कायम रखने के लिए संचालित करो जिससे युद्ध की भीषणता हमसे दूर रहे। हमारे प्रभु यीशूमसीह के द्वारा। आमीन्।

To the most Holy and Adorable Trinity, Father, Son and Holy Spirit, three Persons in one God; to Christ our Lord, the only Wise Counseller, the Prince of Peace; to the Seven Mighty Spirits before the Throne; and to the glorious Assembly of just men made perfect, the Watchers, the Saints, the Holy Ones, be praise unceasing from every living creature; and honour, might and glory, henceforth and for evermore. Amen.

पवित्रतम और पूज्य त्रिमूर्ति (Trinity) का—पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा का जो एक ही ईश्वर के तीन रूप हैं, शान्ति के राजकुमार, ज्ञानी, उपदेष्टा प्रभु यीशू का, प्रभु के सिंहासन के समीप सात शक्तिमान् आत्माओं का, रक्षकों, संतों और महात्माओं का सदा सर्वदा प्रत्येक प्राणी के द्वारा स्तवन हो तथा अद्यावधि और सदा सर्वदा उसकी शक्ति और ऐश्वर्य की अभ्यर्थना हो। आमीन्।

The peace of God, which passeth all understanding, keep your hearts and minds in the knowledge and love of God, and of this Son Christ our Lord and the blessing of God, Almighty, the Father the Son, and the Holy Ghost, be amongst you, and remain with you always. Amen.

ईश्वरीय शान्ति जो अचिन्त्य है, तुम्हारे हृदय और मन को ईश्वर तथा उसके पुत्र हमारे प्रभु यीशू के प्रेम और ज्ञान में रत रखें, तथा सर्वशक्तिमान् परम पिता ईश्वरपुत्र (यीशू) तथा दिव्य आत्माओं का आशीर्वाद (प्रसाद) तुमपर हो तथा सदा तुम्हारे साथ रहे। आमीन्।

मुसलमानों की प्रार्थना

बिस्मिल्ला हिर्रहमानिर्रहीम। अलहम्दोलिल्लाहे रब्बिल आल्मीन्। अर्रहमानिर्रहीम। मालिके यौमिद्दीन्। इय्याका ना' बदो व इय्याका नस्त' ईन। इह्देनस् सिरातलमुस्तक़ीम। सिरातल्लज़ीना अन' अम्त' अलैहिम गैरिल मग़दूबे' अलैहिम वलज्ज़ालीन्। आमीन्।

दयालु, करुणामय प्रभु के नाम पर अखिल विश्व के प्रभु, भगवान् की अभ्यर्थना हो। वह दयालु, करुणामय, धर्मदिवस का अधिपति है। वही ज्ञानमय है। वही शक्तिमान् है। उस सत्पथ में हमारा तू मार्गप्रदर्शक बन, जो पथ तुझमें रमण करनेवालों का है; उनका नहीं है जो तुझे नहीं मानते तथा अधर्माचरण करते हैं।

पारसियों की प्रार्थना

यानीम मनो यानीम वचो यानीम षयओथनेम अषओनो जरथुश्त्र हे। फ्रा अमेषा स्पेंता गाथाओ गेयुरवाइन। नेमो वे माथाओ अषओनीश।

अहया यासा नेमङ्हा उस्तान—ज़स्तो रफेध्रह्या मइनयेंयुश मज़्दाओ पउरवीम स्पेंतह्या अषा विस्पेंग षयओथना।

पुण्यात्मा जरथुश्त्र के कर्म धन्य थे, वचन धन्य थे और विचार धन्य थे। पवित्र (स्वर्गीय) आत्माओं ने धर्मग्रन्थों का प्रकाश किया। हे दिव्य धर्मग्रन्थ! तुम्हारा हम स्तवन करते हैं।

हे मज्द! तुम्हारी अर्चना करते हुए हम तुम्हारी कृपाप्राप्ति की अभिलाषा करते हैं और तुम्हारी ओर हाथ बढ़ाये तुम्हारी दानशील आत्मा के प्रसाद के लिए प्रार्थना करते हैं। हम अत्यन्त नम्रतापूर्वक विनती करते हैं कि सबके प्रति हमारे कर्म सत्यभावना से संपादित हों और तुम्हारी उदारचित्तता के समझने के लिए हम तुमसे करबद्ध प्रार्थना करते हैं जिससे हम गौ की आत्मा के प्रति श्रद्धा दिखला सकें।

वङ्हेउश ख्रतूम मनङ्हो या षनेवीशा गेयूश्चा उर्वानेम। या षयओथनाम हाइतिम यज़मइदे।

हम प्रवित्र अहुनावदगाथा को श्रद्धापूर्वक स्मरण करते हैं जो परम पावन है। अहुनावदगाथा की प्रार्थना का हम श्रद्धापूर्वक स्मरण करते हैं।

अहुनवइतिम गाथाम अषोनिम अषहे रतुम यज़्मइदे ।
अहुनवइतियाओ गाथियाओ हंदाता यज़्मइदे ।
येंगहे हाताम आअत्येस्ने पइतिवेंगहो मज़्दाओ ।
अहुरो वइथा अषत हचा याओंगहाम चा ।
तास चा ताओसचा यज़्मइदे ।
नमस्चा अयार्मेतीश जाय चा ॥
नमस्चा अयार्मेतीश जाय चा ।
नमस्चा अयार्मेतीश जाय चा ॥
अशेम वोहु बहेश्तम् अस्ति, उस्ता अस्ति,
उस्ता अहमाइ ह्यद्षाइ बहेश्ताइ अषेम ।

यषओथनेम नामक हा की हम उपासना करते हैं। पवित्रता के अधिष्ठातृ देवता दिव्य अहुनावद-गाथा की हम उपासना करते हैं। अहुनावदगाथा की प्रार्थना की हम अर्चना करते हैं। हम उन नर नारियों का स्तवन करते हैं जिन्हें अहुर्मज्द (ईश्वर) ने पवित्रता के द्वारा उपासना में श्रेष्ठ माना है। पवित्रता सर्वोत्तम वस्तु है। आनन्द उसको होता है जो पवित्रता के उद्देश्य से ही पवित्र रहता है।

पूज्य मालवीयजी का भजनप्रेम

एक बार मालवीयजी कथा कहने जा रहे थे। विश्वविद्यालय के गायनाचार्य पं० शिवप्रसादजी भजन गा रहे थे—'केशव कहि न जाय का कहिए।' मालवीयजी स्वयं उस भजन को गाने लगे। झूम झूमकर उन्होंने गाया और हम सबको झुमा दिया। केवल गाया ही नहीं, उन्होंने उसकी व्याख्या भी की। पूरे भजन की व्याख्या में कथा का समय भी पूरा हो गया। फिर भजन होने लगा और प्रसाद लेकर हम लोग चल पड़े।

तबसे हम तो कई बार इसपर कथा कह चुके। इसका भजन और मनन तो प्रायः हम नित्य ही करते हैं। विश्वविद्यालय की चराचर सृष्टि देखकर कौन न कह उठेगा—

देखत तव रचना विचित्र अति,
समुझि मनहिं मन रहिए।
केशव कहि न जाय का कहिए†।

---

†गीताधर्म बुकडिपो से प्राप्य, नवप्रकाशित पुस्तक 'कुलपति मालवीय' से। —स०

श्री वैष्णवों की प्रार्थना

(१)

नमो नमो वाङ्मनसातिभूमये
नमो नमो वाङ्मनसैकभूमये ।
नमो नमोऽनन्तमहाविभूतये
नमो नमोऽनन्तदयैकसिन्धवे ॥

(२)

न धर्मनिष्ठोऽस्मि न चात्मवेदी
न भक्तिमांस्त्वच्चरणारविन्दे ।
अकिञ्चनोऽनन्यगतिः शरण्यं
त्वत्पादमूलं शरणं प्रपद्ये ॥

(३)

न निन्दितं कर्म तदस्ति लोके
सहस्रशो यन्न मया व्यधायि ।
सोऽहं विपाकावसरे मुकुन्द
क्रन्दामि संप्रत्यगतिस्तवाग्रे ॥

(४)

निमज्जतोऽनन्तभवार्णवान्तः
चिराय मे कूलमिवासि लब्धः ।
त्वयापि लब्धं भगवन्निदानीम्
अनुत्तमं पात्रमिदं दयायाः ॥

(५)

अभूतपूर्वं मम भावि किं वा
सर्वं सहे मे सहजं हि दुःखम् ।
किं तु त्वदग्रे शरणागतानाम्
पराभवो नाथ न तेऽनुरूपः ॥

(६)

निरासकस्यापि न तावदुत्सहे
महेश हातुं तव पादपङ्कजम् ।
रुषा निरस्तोऽपि शिशुः स्तनंधयो
न जातु मातुश्चरणौ जिहासति ॥

(७)

धिगशुचिमविनीतं निर्दयं मामलज्जं
परमपुरुष योऽहं योगिवर्याग्रगण्यैः ।
विधिशिवसनकाद्यैर्ध्यातुमत्यन्तदूरं
तव परिजनभावं कामये कामवृत्तः ॥

(८)

अपराधसहस्रभाजनं
पतितं भीमभवार्णवोदरे ।
अगतिं शरणागतं हरे
कृपया केवलमात्मसात्कुरु ॥

(९)

न मृषा परमार्थमेव मे
शृणु विज्ञापनमेकमग्रतः ।
यदि मे न दयिष्यते ततो
दयनीयस्तव नाथ दुर्लभः ॥

(१०)

तदहं त्वदृते न नाथवान्
मदृते त्वं दयनीयवान्न च ।
विधिनिर्मितमेतदन्वयं
भगवन् पालय मास्म जीहपः ॥

(११)

वपुरादिषु योऽपि कोऽपि वा
गुणतोऽसानि यथा तथाविधः ।
तदहं तव पादपद्मयो-
रयमद्यैव मया समर्पितः ॥

(१२)

मम नाथ यदस्ति योऽस्म्यहं
सकलं तद्धि तवैव माधव ।
नियतस्वमिति प्रबुद्धधीः
अथवा किं नु समर्पयामि ते ॥

(१३)

अवबोधितवानिमां यथा
मयि नित्यां भवदीयतां स्वयम् ।
कृपयैवमनन्यभोग्यताम्
भगवन् भक्तिमपि प्रयच्छ मे ॥

(१४)

तव दास्यसुखैकसंगिनाम्
भवनेष्वस्त्वपि कीटजन्म मे ।
इतरावसथेषु मास्म भू-
दपि मे जन्म चतुर्मुखात्मना ॥

मन वाणी के अगोचर, किंतु भक्तों की मन वाणी के एकमात्र आधार आप परमेश्वर को मेरा बारंबार प्रणाम है। देश, काल और वस्तुकृत परिच्छेद से रहित, महान् ऐश्वर्यवाले तथा दया के एकमात्र असीम सागर आप भगवान् को बार बार नमस्कार है ॥ १ ॥

मैं न तो धर्मिष्ठ हूँ, न आत्मज्ञानी; और न आप के चरणकमलों में भक्ति ही रखनेवाला हूँ। मैं अकिंचन हूँ, आपके सिवा कोई दूसरा मेरा सहारा नहीं है; इसलिए आप के ही शरण लेने योग्य चरणों की शरण में आ पड़ा हूँ ॥२॥

हे मुकुन्द ! संसार में ऐसा कोई निन्दित कर्म नहीं है जिसे हजारों बार मैंने नहीं किया हो, पर वही मैं आज पापों का कटु परिणाम भोगने के समय आपके सामने असहाय होकर रोता चिल्लाता हूँ ॥ ३ ॥

हे भगवन् ! इस अपार भवसागर के भीतर डूबते हुए मुझे आप बहुत दिनों के बाद तट के रूप में प्राप्त हुए हैं। इधर आपको भी इस समय यह दया का सबसे बड़ा पात्र प्राप्त हो गया है। (अब अवश्य ही दया करके आप इस भवसागर से मेरा उद्धार कीजिए) ॥ ४ ॥

हे नाथ ! मुझपर जो कुछ बीत चुका है उससे विलक्षण कौन सा नूतन दुःख अब मुझे मिलेगा ! (मेरे लिए कोई भी कष्ट नया नहीं है, सब कुछ भोग चुका हूँ। जो होगा–) सब सहलूँगा, दुःख तो मेरे साथ ही उत्पन्न हुआ है, परंतु आपकी शरण में आये हुए का आपके सामने ही अपमान हो, यह आपको शोभा नहीं देता। (अतः मेरे उद्धार में देर न लगाइए) ॥५॥

हे महेश्वर ! यदि आप मुझे अपने पास से दूर हटावें, तो भी मैं आपके चरणकमलों को छोड़ने का कभी साहस नहीं कर सकता; क्योंकि माता यदि कुपित होकर उसे अपनी गोद से अलग कर दे, तो भी दूध पीता हुआ बच्चा माँ के चरणों को कभी नहीं छोड़ना चाहता ॥६॥

हे परम पुरुष ! मुझ अपवित्र, उद्दण्ड, निठुर और निर्लज्ज को धिक्कार है जो स्वेच्छाचारी होकर भी आपका पार्षद होने की इच्छा करता है, जिस पार्षदभाव को बड़े बड़े योगीश्वरों के अग्रगण्य तथा ब्रह्मा, शिव और सनकादि भी, पाना तो दूर रहा, मन में सोच भी नहीं सकते ॥ ७ ॥

हे हरे ! हजारों अपराधों से भरा हुआ मैं भयंकर भवसागर के उदर में गोते लगा रहा हूँ। अब आप कृपा करके अपनी शरण में आये हुए मुझ असहाय को केवल अपना लीजिए ॥ ८ ॥

हे नाथ ! मैं आपके सामने झूठ नहीं कहता, सत्य ही निवेदन करता हूँ ; मेरा यह एक चैलेंज सुन लीजिए। यदि आप मुझपर दया नहीं करेंगें, तो मुझसे बढ़कर दया का पात्र आपको मिलना कठिन है ॥ ९ ॥

इसलिए हे भगवन् ! आपके सिवा मेरा कोई स्वामी नहीं और मेरे सिवा आपके लिए कोई दया का पात्र नहीं है। विधाता के जोड़े हुए परस्पर के इस संबन्ध को आप निभाइए, तोड़ न दीजिए ॥ १० ॥

हे प्रभो ! शरीर, इन्द्रिय, मन प्राण और बुद्धि आदि में मैं जो कोई भी होऊँ, तथा गुण के अनुसार (भला बुरा) जैसा भी होऊँ, मैं तो आज ही अपने को आपके चरणकमलों में समर्पित कर चुका ॥ ११ ॥

हे नाथ ! मेरी बुद्धि में तो यही आता है कि स्वयं मैं और जो कुछ भी मेरा है वह सब आपका ही नियत धन है; ऐसी दशा में, हे माधव ! मैं आपको क्या समर्पण करूँ ॥ १२ ॥

हे भगवन् ! जिस प्रकार आपने स्वयं ही मुझमें सदा रहनेवाली इस भवदीयता (मैं आपका हूँ–इस भाव–) को मुझे बता दिया, उसी तरह कृपा करके अपनी अनन्य भक्ति भी मुझे दीजिए ॥ १३ ॥

आपके दास्य भाव में ही सुख का अनुभव करनेवाले सज्जनों के घर में तो मुझे कीड़े की भी योनि मिले (तो मैं प्रसन्न हूँ), पर दूसरों के घर में तो मुझे ब्रह्मा की भी योनि न मिले (यही मेरी प्रार्थना है) ॥१४॥

रामभक्तों की प्रार्थना

राम की स्तुति

(मुनियों द्वारा)

(सुनि प्रभु बचन हरषि मुनि चारी ❀ पुलकित तनु अस्तुति अनुसारी)
जय भगवंत अनंत अनामय ❀ अनघ अनेक एक करुनामय ॥
जय निर्गुन जय जय गुन सागर ❀ सुख मंदिर सुंदर अति नागर ॥
जय इंदिरा रमन जय भूधर ❀ अनुपम अज अनादि सोभाकर ॥
ज्ञान निधान अमान मान प्रद ❀ पावन सुजसु पुरान बेद बद ॥
तज्ञ कृतज्ञ अज्ञता भंजन ❀ नाम अनेक अनाम निरंजन ॥
सर्ब सर्बगत सर्ब उरालय ❀ बससि सदा हम कहुँ परिपालय ॥
द्वंद बिपति भवफंद बिभंजय ❀ हृदि बसि राम काम मद गंजय ॥

दो० परमानंद कृपायतन, मन पर पूरन काम ।
प्रेम भगति अनपायनी, देहु हमहिं श्री राम ॥

देहु भगति रघुपति अति पावनि ❀ त्रिबिध ताप भव दाप नसावनि ॥
प्रनत काम सुरधेनु कलपतरु ❀ होइ प्रसन्न दीजै प्रभु येह बरु ॥
भव बारिद कुंभज रघुनायक ❀ सेवत सुलभ सकल सुख दायक ॥
मन संभव दारुन दुख दारय ❀ दीनबंधु समता बिसतारय ॥
आस त्रास इरिषादि निवारक ❀ बिनय बिबेक बिरति बिसतारक ॥
भूप मौलि मनि मंडनि धरनी ❀ देहि भगति संसृति सरि तरनी ॥
मुनि मन मानस हंस निरंतर ❀ चरन कमल बंदित अज शंकर ॥
रघुकुल केतु सेतु स्रुति रक्षक ❀ काल कर्म सुभाव गुन भक्षक ॥
तारन तरन हरन सब दूषन ❀ तुलसिदास प्रभु त्रिभुवन भूषन ॥

(यह प्रार्थना प्रायः सभी ढंग के भक्तों में चलती है ।—सं०)

वैरागियों की प्रार्थना

ईशस्तुति

(वेदों द्वारा)

जय सगुन निर्गुन रूप रूप अनूप भूप सिरोमने ।
दसकंधरादि प्रचंड निसिचर प्रबल खल भुज बल हने ॥
अवतार नर संसार भार बिभंजि दारुन दुख दहे ।
जय प्रनत पाल दयाल प्रभु संयुक्त सक्ति नमामहे ॥
तव विषम माया बस सुरासुर नाग नर अग जग हरे ।
भव पंथ भ्रमत अमित दिवस निसि काल कर्म गुनन्हि भरे ॥
जे नाथ करि करुना बिलोके त्रिविध दुख ते निर्वहे ।
भव खेद छेदन दच्छ हम कहुँ रक्ष राम नमामहे ॥
जे ज्ञान मान बिमत्त तव भव हरनि भगति न आदरी ।
ते पाइ सुर दुर्लभ पदादपि परत हम देखत हरी ॥
बिस्वास करि सब आस परिहरि दास तव जे होइ रहे ।
जपि नाम तव बिनु स्रम तरहिं भव नाथ सोइ स्मरामहे ॥
जे चरन सिव अज पूज्य रज शुभ परसि मुनि पतिनी तरी ।
नख निर्गता मुनि बंदिता त्रैलोक्य पावनि सुरसरी ॥
ध्वज कुलिस अंकुस कंज जुत बन फिरत कंटक किन लहे ।
पद कंज द्वंद मुकुंद राम रमेस नित्य भजामहे ॥
अब्यक्त मूलमनादि तरु त्वच चारि निगमागम भने ।
षट् कंध साखा पंच बीस अनेक पर्न सुमन घने ॥
फल जुगल बिधि कटु मधुर बेलि अकेलि जेहि आस्रित रहे ।
पल्लवत फूलत नवल नित संसार बिटप नमामहे ॥
जे ब्रह्म अजमद्वैतमनुभवगम्य मन पर ध्यावहीं ।
ते कहहुँ जानहुँ नाथ हम तव सगुन जसु नित गावहीं ॥
करुनायतन प्रभु सद्गुनाकर देव यह बर माँगहीं ।
मन बचन कर्म बिकार तजि तव चरन हम अनुरागहीं ॥

(रामायण आजकल का हमारा धर्मग्रन्थ, नीतिग्रन्थ सभी कुछ हो रहा है। उसी को हमारे अनेक साधुओं और गृहस्थों ने कर्मकाण्ड का शास्त्र भी बना लिया है। रामायण के दोहे चौपाई मन्त्र और स्तुति तो आपसे आप हो गये हैं। ये दोनों स्तुति रामायण की श्रेष्ठ प्रार्थनाओं में से है। हजारों भक्त इनका नित्य पाठ और भजन करते हैं। जो पाठक चाहें स्वयं करके देखें। —सं०)

भजन

व्यासवचनामृत

भक्ति नव प्रकार की होती है। उसमें भजन का स्थान बहुत ऊँचा है, क्योंकि श्रवण, स्मरण और कीर्तन तीनों मिलकर भजन कहलाते हैं। जब कि भक्ति के किसी एक अङ्ग को लेकर मनुष्य संसार-सागर पार कर सकता है, तब जहाँ तीन तीन अङ्ग एक स्थान पर हैं, उसकी महिमा कौन कह सकता है? स्वयं भगवान् रामचन्द्र कहते हैं कि भजन करनेवाला मुझे 'परम प्रिय' है। भजन के लिए किसी प्रकार का बन्धन भी नहीं है; कोई भी हो, केवल निष्कपट होकर भजे।

पुरुष नपुंसक नारि नर, जीव चराचर कोइ।
सर्वभाव भजि कपट तजि, मोहिं परम प्रिय सोइ॥

—रामचरितमानस

× × ×

आप कहेंगे कि भगवान् तो घट घट व्यापक हैं, वह क्यों किसी को प्रिय किसी को अप्रिय समझेंगे? नहीं, वह किसी को अप्रिय नहीं समझते, उनके लिए सभी समान हैं। लेकिन भजन करनेवाला उन्हें 'परम प्रिय' है। उसमें भगवान् विशेष रूप से प्रकट रहते हैं। स्वयं उन्होंने कहा है—

समोऽहं सर्वभूतेषु न मे द्वेष्योऽस्ति न प्रियः।
ये भजन्ति तु मां भक्त्या मयि ते तेषु चाप्यहम्॥

—गी० ९।२९

'मैं सब भूतों में समान भाव से व्यापक हूँ, न कोई मेरा अप्रिय है, न कोई प्रिय; परंतु जो भक्त मुझे प्रेम से भजते हैं, वे मुझमें और मैं भी उनमें प्रत्यक्ष प्रकट हूँ।'

× × ×

१—भजन कैसे भी करो वह सदा फलदायक है। भगवान् का नाम सुनो, गुणानुवाद करो, स्वयं उनके चरित्रों की कथा कहो तुम्हें सुख और शान्ति अवश्य मिलेगी; कल्याण और निःश्रेयस की प्राप्ति जरूर होगी।

भाय कुभाय अनख आलस हूँ।
नाम जपत मंगल दिसि दसहूँ॥

२—जाति पाँति की भी कोई रुकावट नहीं है। जो जिसका भजन करता है वह उसी का हो जाता है। आप हरि का भजन करेंगे, तो आपका स्वतन्त्र अस्तित्व कहाँ रहा, आप भी हरिमय हो गये, इसी लिए कहा है—

जाति पाँति पूछै नहिं कोई।
हरि कौ भजै सो हरि कौ होई॥

३—परमात्मा परम कृपालु हैं। वह शब्द हीन देखते—भाव देखते हैं। शब्दाडम्बर से तो हम संसारी—चर्मचक्षुवाले—धोखा खाते हैं। प्रभु तो हृदय में निवास करते हैं। हृदय को ही देख लेते हैं। हमारे वचन और कर्म तो भाव के ही रूपान्तर हैं। अतः भाव यदि शुद्ध और सच्चे हैं तो टेढ़े-मेढ़े शब्द और कर्म भी भीतर से शुद्ध ही समझे जायँगे। यही कारण है कि—

उलटा नाम जपत जग जाना।
बालमीकि भे ब्रह्म समाना॥

उन्हें तो 'मरा' में ही 'राम' का रूप दिखलाई पड़ गया।

× × ×

नाम तो बस रूप का बोध कराने का साधनमात्र है। इसी लिए नाम का इतना माहात्म्य है, यह जप और नामकीर्तन का रहस्य है। सीधे रूप का बोध होना असंभव समझकर ही सभी जगह नाम की आवश्यकता पड़ती है। कोई भी धर्म हो, कोई भी उपासनापद्धति हो, सबमें भगवन्नाम का स्मरण कीर्तन मान्य है। कलियुग में जब कि कठिनाइयों के कारण उपासना के अन्य अङ्ग दुर्ग्राह्य हो गये हैं तभी नाम का इतना महत्त्व रखा गया है—

हरेर्नामैव नामैव नामैव मम जीवनम्।
कलौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा॥
—बृ० नारद० १।४१।१५

'कलियुग में जीवन के निस्तार का और कोई उपाय नहीं है, नहीं है, नहीं है; केवल भगवान् का नाम लेना ही, नाम लेना ही, नाम लेना ही हमारे जीवन का परम ध्येय है*।'

× × ×

अब भजन किया किसका जाय, यह भी जानने की इच्छा स्वभावतः हो सकती है। भजन का फल यह है कि जो जिसे भजता है वह उसी के समान हो जाता है—उसी के लोक में जाता है†। इसलिए सकल चराचर के स्वामी, जगन्नियन्ता, परम पिता अज, शाश्वत और अनन्तवीर्य भगवान् नारायण का ही भजन करना चाहिए। कहा भी है—

आलोड्य सर्वशास्त्राणि विचार्य च पुनः पुनः।
इदमेकं सुनिष्पन्नं ध्येयो नारायणः सदा॥
—लिङ्गपुराण २।७।११

'सब शास्त्रों को मथकर अर्थात् उनका सार निकालकर और बार बार विचारकर यही सिद्ध हुआ है कि भगवान् नारायण का ही ध्यान करना चाहिए।'

× × ×

नारायण कोई भी हो सकते हैं। नारायण तो वस्तुतः नरों के अयन हैं। वह किसी धर्म या जाति-विशेष के बन्धन में नहीं हैं। हम पहले भी कह चुके हैं, नाम तो केवल नामवाले की ज्ञानप्राप्ति का सहारा है। इसलिए नारायण, गॉड, अल्लाह, बुद्ध, अर्हत्, ब्रह्म, पुरुष आदि सभी एक हैं। जो जिस नाम से उनका सुगमतापूर्वक ध्यान कर सके उसी नाम से भजे। लेकिन भजन करना आवश्यक है, क्योंकि बिना इसके दूसरे सभी साधन शून्यवत् हैं। नाम का साथ होने से ही अन्य साधनों का महत्त्व है और यह महत्त्व भी दसगुना बढ़ जाता है। गोस्वामी तुलसीदास ने राम के नाम को लेकर इसी बात को बिल्कुल गणित के रूप में कह डाला है। वे कहते हैं—

राम नाम को अंक है, सब साधन हैं सून।
अंक गये कछु हाथ नहिं, अंक रहे दस गून॥

'राम का नाम अङ्क है, तथा अन्य साधन शून्य हैं। जिस प्रकार अङ्क से हीन होने पर शून्य का कुछ भी महत्त्व नहीं रह जाता और अङ्क से युक्त होने पर दसगुना बढ़ जाता है।' (जैसे १ के साथ ० होने से १० हो जाता है और अकेले केवल ० रह जाता है, उसी प्रकार राम नाम के साथ होने से सभी साधनों का महत्त्व दस गुना बढ़ जाता है।)

× × ×

इसलिए वेद, पुराण और महर्षियों के समान हम भी यही कहेंगे कि बड़े पुण्य के फल से मनुष्य का नाम से अनुराग होता है

वेद पुराण संत मत येहू।
सकल सुकृत फल रामसनेहू॥

गोस्वामी तुलसीदासजी इसी बात को कैसे सुन्दर ढंग से अपने शब्दों में कहते हैं—

राम नाम मनिदीप धरु, जीह देहरी द्वार।
तुलसी भीतर बाहिरौ, जौ चाहसि उँजियार॥

---

* इसमें एक बात तीन बार कहने का तात्पर्य है कि यह ध्रुव सत्य है। इसमें संशय का स्थान नहीं।

† प्रमाण के लिए इसी अङ्क में अन्यत्र प्रकाशित श्री गीतानन्दजी के प्रश्नोत्तर में देखा जा सकता है।

मेरी शरण

'सर्वधर्मान् परित्यज्य'

गीताव्यास

(ले० —लोकसंग्रही स्वामी विद्यानन्दजी महाराज, घंटाकोठी, कनखल)

गीता का सार तत्त्व है—

'मेरी शरण गहो'

'मामेकं शरणं व्रज'

भजन का मूल मन्त्र भी यही है—सब धर्मों का त्याग करके मेरी शरण में आओ।

सभी संतों, महात्माओं, भक्तों और आचार्यों ने इस मन्त्र की अपने अपने ढंग से व्याख्या की है। इसी से तो इस श्लोक को मन्त्र कहते हैं, क्योंकि मन्त्र को मनन करने और उससे अपना अर्थ सिद्ध करने का सभी को अधिकार है। अतः हम यहाँ इस श्लोक और मन्त्र की विशेष व्याख्या न करेंगे। यह तो बड़े वाद-विवाद और झगड़े की बात होगी। हम केवल इतना ही कहेंगे कि प्रभु के प्रेमियो! प्रभु की एक बात पर ध्यान दो, मामेकं शरणं व्रज—एक मेरी शरण लो। शरण लेने का नाम ही है भजन। अर्थात् भाइयो, और चीजें चाहे छोड़ो चाहे रखो, पर भजन तो सदा करो। भजन से ही जीवन बनेगा।

प्र०—वह भजन कैसे करना?

उ०—सीधे सच्चे और श्रद्धालु हृदय से। जब तुम हृदय से भजन करने चलोगे, प्रभु तुमको ढंग सिखा देंगे। ध्रुव और प्रह्लाद को जिस प्रभु ने भजन करने का ढंग सिखा दिया था, जो प्रभु आज भी हजारों शरण में गये भक्तों को भक्ति सिखा देता है वही प्रभु तुम्हें भी सिखा देगा, निश्चय सिखा देगा।

यहाँ एक बात मैं अपने अनुभव की कह दूँ। भाइयो, सज्जनों का लक्षण तो यह है कि अपने गुणों की वे कभी चर्चा नहीं करते—वे अपना उदाहरण कभी नहीं देते। ऐसा व्यक्तिगत उल्लेख विनय और नम्रता के विरुद्ध होता है। इसी से अपने अनुभव की बात कहने में भी मुझे संकोच होता है। कहीं लोग इसे अहंकार और सिद्धि का प्रदर्शन न समझें। पर साधु जब अपने भाई बहनों का भला करने चलता है, तो वह निन्दा स्तुति की परवा नहीं करता। वह सौजन्य की और व्यक्तिगत प्रतिष्ठा की रक्षा की ओर ध्यान नहीं देता। वह जो ठीक समझता है वही कहता और करता है। आज मैं भी, इसी से, अपने अनुभव की बात कहूँगा।

मैंने जब संन्यास लिया तब मैं लड़का था। मुझे पढ़ने लिखने पर भी यह कभी न मालूम हो सका कि प्रभु का भजन कैसे किया जाता है और प्रभु कैसे मिलते हैं? मैं हिंदुस्तान भर घूमा और बहुत से साधु संतों से मिला, पर कुछ पता न चला और न संतोष मिला। पर अन्त में जब मैं हृदय से रो पड़ा कि प्रभु, क्या अब मुझे कभी दर्शन न मिलेगा? तो आप से आप गीता माई ने आकर रास्ता दिखा दिया। मैं भगवान् का भजन करने लगा। माँ गीता का पाठ और प्रचार करने लगा। अब तो मेरा जीवन ही एक भजन बन गया है। और मेरी यह धारणा

हो गई है कि हर एक को भगवान् भजन करने का उपाय अलग अलग बतलाते हैं। उन्होंने कहा ही है–

ये यथा मां प्रपद्यन्ते
तांस्तथैव भजाम्यहम्।

जो मेरे पास जिस प्रकार पहुँचते हैं, मैं उनसे उसी प्रकार मिलता हूँ, उनको वैसा ही भजन का उपाय बताता हूँ।

अतः मैं कोई एक उपाय भजन का किसी को नहीं बता सकता। मै इतना ही कह सकता हूँ कि 'तुमसे जिस प्रकार बने श्रद्धा और भक्ति से भजन करो, निश्चय तुम आगे बढ़ोगे और आपसे आप रास्ता सूझ पड़ेगा।

इतने पर भी तुम हठ करते हो और हमसे भजन का ढंग पूछते हो, तो हम एक बात और कह देंगे—

१. भक्तों की गाथाएँ पढ़ो, महात्माओं के अनुभव सुनो, कथा वार्ताएँ सुनो और सत्संग करो।

२. एकान्त में बैठकर गीता और रामायण का पाठ करो और समझी हुई बातों का मनन करो।

३. सदा तन, मन और वाणी से सच का व्यवहार करो। बस, इससे अधिक मैं कुछ नहीं कह सकता।

भज गोविन्दं भज गोविन्दं गोविन्दं भज मूढ़मते।
धन यौवन यूँ जायँगे जैसे उड़त कपूर।
मन मूरख गोविन्द भज क्यों चाटत जगधूर॥

श्रीमन्नारायण नारायण नारायण॥

शरण आये

(भक्त प्रवर गोस्वामी तुलसीदासजी)

मैं हरि पतित पावन सुने।
मैं पतित तुम पतितपावन दोउ बानक बने॥
ब्याध गनिका गज अजामिल साखि निगमागम भने।
और अधम कितेक तारे जात कापै गने॥
जानि नाम अजानि लीन्हें नरक सुरपुर मने।
दास तुलसी 'सरन आये' राखिए अपने॥

प्रार्थना और भजन का सबसे सहज उपाय

[सत्यदेव की पूजा]

(ले०--श्री सत्यव्रत शास्त्री)

आजकल के अर्थशास्त्री कहते हैं कि हमारा लक्ष्य है कम से कम परिश्रम में अधिक से अधिक लाभ उठाना। विचार कर देखा जाय, तो यही हर एक मनुष्य की प्रवृत्ति है। मनुष्य छोटा प्राणी है, उसकी आयु भी छोटी, उसकी शक्ति भी छोटी है और उसके चारों ओर अनन्त रत्नों का भंडार भरा हुआ है। जब यह दो हाथ का छोटा मनुष्य इस बड़े विश्व के भंडार को देखता है, तो आपसे आप उसकी इच्छा होती है कि किस छोटे से छोटे उपाय से शीघ्र ही हम इन चीजों को पा लें।

प्रार्थना और भजन के भी हजारों ढंग हैं। अतः यहाँ भी मनुष्य यही सोचा करता है कि सबसे सरल उपाय मिले और हम सब कुछ कर डालें। बड़े लोगों ने दया करके ऐसा एक उपाय बताया है। उसका नाम है—

सत्यदेव की पूजा

दर्शनाङ्क में सत्यदेव की व्याख्या निकल चुकी है।

यह व्रत इतना सहज और व्यापक है कि भारत में आज सबसे अधिक प्रचार इसी का है। यही आजकल का सार्वजनिक यज्ञ हो गया है। लोग जलसा करते हैं, पूजा करते हैं और साथ ही जीवन में एक शिक्षा सीखते सिखाते हैं—वह है सत्य का जीवन बिताने की शिक्षा।

यह सत्यदेव की पूजा सर्वथा लौकिक और सामान्य बात है, पर उससे लाभ सबसे अधिक होता है; यदि हम इतना न भूलें कि यह सत्य का भजन है, सत्य की प्रार्थना है, सत्य की पूजा है।

'प्रार्थना' का विवेचन

[भिन्न भिन्न देशों तथा धर्मों की प्रार्थनाओं का एक विवेचन]

(ले०—श्री शिवशंकर त्रिवेदी, एम० ए०)

प्रार्थना शब्द का अभिप्राय है आदरपूर्वक विनती करना। किसी दैवी और विलक्षण शक्ति के संमुख जब विनती के रूप में कोई अभिलाषा प्रकट को जाती है तब उसे प्रार्थना कहते हैं। बहुत प्राचीन काल से ही प्रार्थना का यही मतलब समझा जाता है। दैवी और अद्भुत शक्तियों से प्रायः लोग डरते भी रहते हैं। इस भय के कारण प्रार्थना में भी भय का कुछ न कुछ अंश पाया जाता है *।

प्रार्थना के उद्भव के संबन्ध में विचार करने से हमें यह विदित होता है कि यन्त्र मन्त्र और जादू टोना से प्रार्थना का बड़ा घनिष्ठ संबन्ध है। शायद यह कहना भी गलत न होगा कि जादू टोना में कहे जानेवाले मन्त्रों और उच्चारणों से ही प्रार्थना का आरम्भ हुआ है। जादू टोना के मन्त्रों और प्रार्थनाओं के तत्त्वों की छान बीन करनेवाले अनेक विद्वानों ने दोनों में यह एक भेद ढूँढ़ा है कि प्रार्थनाओं में किसी विशेष देवता या किसी न किसी विशेष शक्ति को संबोधति किया जाता है तथा उससे यह कहा जाता है कि आप अमुक कार्य में सिद्धि दीजिए। और जादू टोना के मन्त्रों में यह बात नहीं होती। किंतु इस प्रकार का कोई स्पष्ट भेद देखने में नहीं आता। अनेक बाजीगर और तान्त्रिक लोग अपनी शक्तियों का प्रदर्शन करते समय यह कहते हुए देखे जाते हैं कि अमुक घटना घटित हो जाय। यह तो कार्यसिद्धि की प्रार्थना ही हुई। ये लोग 'अगियावीर' 'कोइलियावीर' आदि विचित्र नामों का संबोधन भी करते हैं अर्थात् वे एक न एक शक्ति को बुलाते भी हैं। वास्तव में बात तो यह जान पड़ती है कि जादू टोना और प्रार्थना का बड़ा पुराना संबन्ध है तथा दोनों एक दूसरे से बहुत अधिक मिल जुल गये हैं। अनेक देशों में कई प्रकार की प्रार्थनाएँ बहुत धीरे धीरे की जाती हैं कि जिससे कोई दूसरा उन्हें सुनने न पाये। कहीं कहीं कुछ विशेष प्रकार की प्रार्थनाएँ ऐसी भी हैं जो दूसरे व्यक्तियों से छिपाकर गुप्त स्थानों में की जाती हैं। कुछ प्रार्थनाएँ ऐसी भी है (जैसे कि हिंदूधर्म के अनेक स्तोत्र आदि) जिनको बार बार कहने से फल की प्राप्ति होती है। कुछ इस प्रकार की भी प्रार्थनाएँ हैं जिनका कोई अर्थ ही नहीं होता, किंतु उनके बार बार दोहराने से सिद्धि की आशा की जाती है। ये सब बातें जादू टोना में ही विशेष रूप से पाई जाती हैं तथा इनसे यह भी प्रकट होता है कि कदाचित् प्रार्थनाओं की उत्पत्ति जादू टोना के ही आधार पर हुई होगी [1]।

अधिकतर किसी वस्तु की प्राप्ति के लिए अथवा किसी कष्ट से छुटकारा पाने के लिए ही प्रार्थना की जाती है। कहीं कहीं ऐसे पर्व और समय बँध गये हैं जिनमें नियमित रूप से व्यक्तिगत अथवा सामूहिक प्रार्थनाएँ की जाती हैं।

---

* लेख में नाना प्रकार की बहुत सी बातें आई हैं, पर लेखक के सभी विचारों से संपादक सहमत नहीं; अतः पाठक भी धैर्य से पढ़ने को कृपा करें और संपादक को सभी बातों के लिए उत्तरदायी न समझें। —सं०

१—प्रार्थना के श्लोकों और पदों को हम मन्त्र कहते हैं। यह भी ध्यान देने योग्य है, क्योंकि मन्त्र में अदृष्ट शक्ति और सिद्धि रहती है।

कुछ उच्च और सभ्य समाजों में ऐसा भी चलन पाया जाता है कि अनेक अन्य दैनिक कार्यों के समान प्रार्थना भी नित्य की जाती है। कुछ लोग मनोवृत्तियों के सुधार तथा चित्त की शुद्धि के लिए भी प्रार्थना करते हैं। किंतु संसार में प्रायः लौकिक उन्नति के उद्देश्य से ही प्रार्थना करने का रिवाज पाया जाता है। प्रार्थनाशब्द के अर्थ में ही माँगने और इच्छा करने का भाव विद्यमान है, इसलिए प्रार्थना कभी निष्काम नहीं हो सकती। जब किसी प्रकार की कामना ही न होगी, तो प्रार्थना करने का कोई प्रयोजन ही नहीं है।

इस विषय पर भी कुछ विचार कर लेना आवश्यक जान पड़ता है कि संसार में कौन सी ऐसी शक्तियाँ है अथवा कौन से ऐसे देवसमुदाय है जिनके संमुख प्रार्थनाएँ की जाती हैं। प्रायः लोग ऐसी शक्तियों से प्रार्थना करते है जो उनकी वाञ्छित इच्छाओ को पूरी करने का सामर्थ्य रखती हैं। इस प्रकार की जितनी शक्तियाँ संसार मे मानी गई हैं उनकी संख्या का पता लगाना तो असंभव ही सा है। किंतु इससे यह मतलब नही निकाला जा सकता है कि जितनी बड़ी बड़ी शक्तियाँ है अथवा जितने बड़े बड़े देवी देवता हैं, अथवा मानवहृदय में जितने भी भय उत्पन्न करनेवाले पदार्थ हैं, उन सभी से प्रार्थनाएँ की जाती है। प्राचीन काल में भूत प्रेतों में बहुत अधिक विश्वास किया जाता था और अब भी अशिक्षित समाजों में उनके प्रति कम विश्वास नहीं किया जाता है। ये भूत प्रेत बहुत समर्थ भी माने जाते हैं। किंतु इनके प्रति प्रार्थना बहुत ही कम की जाती है। कभी कभी बहुत बड़ी शक्तियों को छोड़कर छोटी छोटी शक्तियों से ही अधिक प्रार्थनाएँ की जाती हैं। इसका एक प्रधान कारण है। हमारे दैनिक जीवन में प्रायः छोटी छोटी शक्तियों और साधारण देवी देवताओं से ही संबन्ध रहता है। बड़े बड़े देवगण तो केवल छोटी शक्तियों का अनुशासनमात्र करते हैं। जब छोटे छोटे देवी देवताओं के द्वारा कार्य में सिद्धि नहीं प्राप्त होती तब बड़े देवताओं की शरण में जाना पड़ता है। उस समय उनसे प्रार्थना करने की आवश्यकता पड़ती है। संसार के अनेक धर्मों में प्राकृतिक पदार्थों से भी प्रार्थना करने का रिवाज है। हिंदूधर्म में भी वायु, जल, अग्नि, आकाश, पृथिवी, नदी, पर्वत, वृक्ष, ग्रह और नक्षत्र आदि से बहुत प्राचीन काल से प्रार्थनाएँ की जाती है। मृतात्माओं से भी प्रार्थना करने का रिवाज संसार की अनेक जातियों में पाया जाता है। कदाचित् मृतात्माओं से यह आशा की जाती है कि वे प्रार्थना को सुनकर हमें कुछ सहायता पहुँचावेंगी अथवा हमें कष्ट देने की यदि उनकी इच्छा रही होगी, तो प्रार्थना से प्रसन्न होकर अब भविष्य में कष्ट न देंगी।

प्रार्थनाओं का अधिक प्रचार पुरोहितों और पुजारियों का एक वर्ग बन जाने के कारण हुआ है। वैसे तो प्रार्थनाएँ व्यक्तिगत रूप में भी की जाती हैं, किंतु उनको बतानेवाले पुरोहित लोग ही हुआ करते है। यहाँ पर पुरोहित शब्द का संकुचित अर्थ न लेकर एक व्यापक भाव मे अर्थ समझना चाहिए। धर्म के संबन्ध में जिन व्यक्तियों ने आदेश दिये है अथवा जो व्यक्ति धार्मिक कार्यों का संपादन करवाते हैं वे सभी पुरोहित शब्द की सीमा के अंदर मान लिये गये हैं।

दो बाते ऐसी हैं जिनके कारण पुरोहितवर्ग का प्रार्थनाओं से घनिष्ठ संबन्ध रहता है। प्रथम तो यह है कि पुरोहित लोग प्रार्थनाओं के संबन्ध में अधिक जानकारी रखते हैं। वे लोग ठीक ठीक प्रार्थना करने की विधि, उसका उपयुक्त समय तथा किस फल की प्राप्ति के लिए किस देवी या देवता से प्रार्थना करनी चाहिए, इस प्रकार की सभी बातों का पूरा पूरा ज्ञान रखते हैं। दूसरी बात यह है कि बहुधा सामूहिक रूप में भी प्रार्थनाएँ की जाती हैं। ऐसी प्रार्थनाएँ किसी वर्ग, जाति, ग्राम, समाज अथवा देश

आदि की शुभ कामना से की जाती हैं। इनमें किसी ऐसे व्यक्ति का होना आवश्यक रहता है जो प्रार्थना की विधि का नियमित रूप से संपादन करे। प्रायः सभी धर्मों और संप्रदायों में इस प्रकार के पुरोहित होते हैं जिनका मुख्य काम यही होता है कि वे प्रार्थनाओं का नियमित रूप से संचालन करें।

आध्यात्मिकता की उच्च श्रेणी पर पहुँचे हुए धर्मों और संप्रदायों में प्रार्थना का यह उद्देश्य माना गया है कि जिस देवी या देवता से प्रार्थना की जाय उसके साथ प्रार्थना करनेवाले का आध्यात्मिक संबन्ध स्थापित हो जाय। किंतु प्रार्थना के संबन्ध में ऊपर जो कुछ कहा गया है उससे तो यही प्रकट होता है कि अधिकतर लौकिक अर्थों की प्राप्ति के ही लिए प्रार्थना की जाती है। प्रत्यक्ष रूप से देखने पर भी प्रायः सभी समाजों में यही बात पाई जाती है। साधारण समाजों में तो मानसिक सुधार, चरित्र की पवित्रता, पापों की क्षमा आदि के लिए भी प्रार्थनाएँ बहुत ही कम की जाती हैं।

भिन्न भिन्न देशों और भिन्न भिन्न धर्मों में प्रार्थना की व्यापकता और उसके उपयोग में बड़ा अन्तर पाया जाता है। प्रार्थना के संबन्ध में जानकारी प्राप्त करने की इच्छा रखनेवाले पाठकों को अनेक प्रकार की प्रार्थनाएँ पढ़कर उनके संबन्ध में विवेचन करना चाहिए। यह बहुत ज्ञानवर्द्धक तथा रोचक विषय है। प्रायः सभी प्रधान देशों और धर्मों की प्रार्थनाओं का संक्षिप्त परिचय कराने के लिए नीचे हम कुछ लिखेंगे। आशा है, इससे कुछ न कुछ प्रार्थना के संबन्ध में पाठकों का ज्ञान अवश्य बढ़ेगा।

अमेरिका में ईसाईधर्म का ही अधिक प्रचार है। किंतु वहाँ के मूलनिवासियों का धर्म दूसरे प्रकार का है और उनकी प्रार्थना भी दूसरे ढंग से की जाती है। वहाँ पर प्रार्थना के अंदर वे सभी धार्मिक कार्य आ जाते हैं जिनके द्वारा अदृष्ट प्राकृतिक शक्तियों के साथ मनुष्य का घनिष्ठ संबन्ध स्थापित हो सके। इस दृष्टि से अमेरिका के इंडियनों के नृत्य भी प्रार्थना ही माने जाते हैं, क्योंकि वे लोग यह मानते हैं कि उनके नृत्य से देवता प्रसन्न होते हैं और उनके हृदय में अपनी शक्ति का संचार करवा देते हैं[1]। इस प्रकार वे लोग देवताओं के अधिक समीप आ जाते हैं। वे लोग सूर्य, चन्द्रमा, आकाश, पृथिवी आदि की भी प्रार्थना करते हैं तथा कभी कभी इन सबसे परे जो परम परमात्मा है उसकी भी प्रार्थना करते हैं। इस प्रकार उनकी प्रार्थनाएँ दो भागों में विभाजित की जा सकती हैं:—

(१) ऐसी प्रार्थनाएँ जिनमें जादू टोना आदि के शब्द हों तथा जो प्रकृति अथवा छोटे छोटे देवताओं के प्रति की जायँ।

(२) ऐसी प्रार्थनाएँ जो परम पिता या सबसे बड़े ईश्वर के प्रति की जायँ।

अमेरिका के इंडियन लोगों की प्रार्थना का भाव यह है कि—

'हे पिता! मुझपर दया करो। मैं भूख के मारे रो रहा हूँ। यहाँ पर कोई भी वस्तु ऐसी नहीं है जो मुझे संतुष्ट कर सके।'

बैबिलोनिया देश में अनेकों प्रकार की प्रार्थनाएँ प्रचलित हैं। वहाँ पर व्यक्तिगत प्रार्थनाओं का महत्त्व अधिक है तथा उन्हीं का प्रचार भी अधिक है। वहाँ की प्रार्थनाओं को भी हम दो भागों में विभाजित कर सकते हैं। एक प्रकार की प्रार्थनाएँ तो वे हैं जो व्यक्तिगत

१—भारतवर्ष के हिंदुओं में भी देवताओं के संमुख जो नृत्य गीत आदि करने का रिवाज है उससे भी यह समझा जाता है कि देवता प्रसन्न होते हैं। कभी कभी मनोवाञ्छाओं की पूर्ति के लिए भी देवी देवताओं के संमुख कीर्तन होते हैं।

—सं०

अथवा सामूहिक रूप में देवताओं की प्रसन्नता के लिए तथा अनेक कार्यों को सिद्धि के लिए की जाती हैं। दूसरी प्रकार की प्रार्थनाएँ वे हैं जो पापों के लिए क्षमाप्राप्ति के उद्देश्य से की जाती हैं। पहले प्रकार की प्रार्थनाएँ पद्य में ही होती हैं तथा जादू टोना आदि से उनका किसी प्रकार से भी संबन्ध नहीं होता है। वहाँ एक प्रकार की विशेष प्रार्थनाएँ ऐसी पाई जाती है जिनका दूसरे देशों में बहुत कम प्रचार है। वे प्रार्थनाएँ प्राचीनकालीन राज्य संबन्धी कागजों तथा अनेक प्रकार की विज्ञप्तियों और आज्ञाओं के अन्त में जोड़ दो जाती थी। प्राचीन शिलालेखों में भी ऐतिहासिक विवरणों के अन्त में इस प्रकार की बहुत सी प्रार्थनाएँ पाई गई हैं।

चीन देश मे प्रार्थनाओं का प्रचार बहुत ही पुराने समय से चला आ रहा है। बात बात में वहाँ प्रार्थना करने का रिवाज है। अनेक प्रकार की प्रार्थनाओं के शब्द और वाक्य बँधे हुए हैं जिनके अनुसार ही प्रार्थनाएँ की जाती हैं। उन प्रार्थनाओं में कभी कभी प्रार्थना करनेवाले का नाम, देवता का नाम तथा स्थान और दिन, मास और संवत्सर आदि के नाम ऊपर से जोड़ दिये जाते हैं। किंतु कभी कभी अपने स्वतन्त्र शब्दों में भी लोग प्रार्थना करते हैं। वहाँ पर भी प्रार्थनाएँ प्रायः किसी न किसी लौकिक वस्तु की प्राप्ति के ही लिए की जाती हैं। चीन में भारतवर्ष के ही समान प्रार्थना करने के लिए तमाम देवताओं का प्रचार है। सबसे बड़े देवता का नाम 'शांगती' है। इनके लिए वहाँ के बादशाह के द्वारा प्रति वर्ष बड़ी धूम धाम और बड़े जलसे के साथ प्रार्थना की जाती है। इन परम देवता के बाद फिर और बहुत से देवताओं का स्थान है। अनेक प्राकृतिक वस्तुओं, जैसे—पहाड़, नदी, नाले आदि, से भी प्रार्थनाएँ की जाती हैं। ये सब बातें चीन में प्रचलित 'ताओ' धर्म की हैं जिसमें कि इस संसार से परे कोई और देवता नहीं माना जाता है। किंतु चीन के वे निवासी जो बौद्धधर्म के अनुयायी हैं, एक दूसरी हो तरह से प्रार्थना करते हैं। उनकी प्रार्थना का आधार कोई मूर्ति नहीं होती है और न किसी साकार वस्तु की कल्पना के द्वारा वे प्रार्थना करने की प्रेरणा ही प्राप्त करते हैं। अशिक्षित बौद्धों को छोड़कर चीन के बौद्ध प्रायः भावनाओं की ही उपासना करते हैं। उनकी यह उपासना मन को वशीभूत करने के लिए होती है, न कि किसी लौकिक पदार्थ की प्राप्ति के लिए। इसलिए इसको प्रार्थना कहना ठीक नहीं जान पड़ता है। बौद्धों के लिए प्रार्थना का कोई प्रयोजन ही नहीं है, किंतु फिर भी चीन देश मे प्रत्येक व्यक्ति प्रार्थना करने की आवश्यकता समझता है तथा प्रार्थना करने के लिए इच्छुक भी रहता है। कदाचित् इसका कारण यही है कि आध्यात्मिकता की उच्च भूमिका पर पहुँचे हुए व्यक्तियों की संख्या अधिक नहीं है। चीन के कनफ्यूसियनधर्म के माननेवाले एक विद्वान् ने प्रार्थना की परिभाषा करते हुए कहा है कि—

'बुरे कर्मों के लिए पश्चात्ताप करने तथा भविष्य में अपना सुधार करने की प्रतिज्ञा करने के लिए विशेष आत्माओं से जो सहायता ली जाती है उसे प्रार्थना कहते है। यदि बुरे कर्म नहीं किये जाते, तो प्रार्थना की कोई आवश्यकता नहीं है।'

प्रार्थना के समय चीन में भय और आदर का भाव रखा जाता है। झुकने तथा जमीन पर माथा रखने की प्रथा भी चीन में है। इसी से वहाँ पर प्रार्थना करने के समय चटाइयाँ बिछाने का रिवाज है। जो लोग दुर्बल होने के कारण झुकने में असमर्थ हैं उनके लिए खड़े रहने का नियम है। प्रार्थना के समय हाथ जोड़ने का रिवाज भी चीन में है।

फारस में अब तो अधिकांश रूप में मुसलमानधर्म का ही प्रचार है, किंतु वहाँ का प्राचीन धर्म पारसीधर्म है। इस धर्म के माननेवाले भारतवर्ष में भी पाये जाते हैं। इसमें

रोम में भी लौकिक वस्तुओं को प्राप्त करना ही होता था। किंतु अब तो रोम में ईसाईधर्म का प्रचार है और वहाँ ईसाईधर्म के अनुसार प्रार्थनाएँ की जाती हैं।

फिनलैंड और लैपलैंड में प्रत्येक प्राकृतिक वस्तु एक जीवित आत्मा समझी जाती है तथा उसके प्रति वैसी ही धारणा रखी जाती है जैसी कि एक जीवित मनुष्य के प्रति। वहाँ स्पष्ट रूप से प्रार्थनाओं का प्रचार अब भी नहीं है। प्राकृतिक पदार्थों के प्रति जो भाव प्रदर्शित किये जाते हैं तथा जिस प्रकार के शब्दों में उनका संबोधन किया जाता है उनसे यही प्रकट होता है कि लोग उनसे सदैव डरते रहते हैं। उनकी जो विनती की जाती है वह जादू टोना से ही मिलती जुलती है।

मेक्सिको देश में प्राचीनकालीन प्रार्थनाओं का प्रचार चला आ रहा है। 'सहागुन' नाम के एक महापुरुष ने अपने जीवनकाल में जो महान् कार्य किये थे उन्हीं का गुण-गान मेक्सिको में किया जाता है। वहाँ पर व्यक्तिगत तथा सामूहिक दोनों प्रकार की प्रार्थनाएँ प्रचलित हैं। लौकिक सुख के साधनों की प्राप्ति ही वहाँ भी प्रार्थना का उद्देश्य होता है।

ट्यूटन लोगों की प्रार्थना में हम प्राचीनकालीन देवताओं के उपासकों का ढंग देखते हैं। किंतु उनकी बातों का ठीक ठीक ज्ञान हमको नहीं है। जो कुछ जाना जा सकता है उसके आधार पर हम केवल यही कह सकते हैं कि पहले उनके यहाँ संकट के अवसरों पर ही प्रार्थना की जाती थी। बाद में मूर्तियों की स्थापना होने लगी थी तथा मन्दिर भी बन गये थे। मूर्तियों के सामने बलि करने का भी रिवाज उनके यहाँ चल पड़ा था। प्रार्थना करानेवाले एक विशेष पुरोहितवर्ग की भी वहाँ स्थापना हो गई थी।

संसार के प्रधान धर्मों की प्रार्थनाओं के संबन्ध में भी कुछ जान लेना आवश्यक है। बौद्धधर्म में यह नहीं माना जाता है कि व्यक्तिगत रूप में इस संसार से परे कोई और ईश्वर है। इस धर्म में यह माना जाता है कि मनुष्य अपने मन को वश में कर लेने से तथा सत्य और अहिंसा आदि के पालन से पूर्णता को प्राप्त कर सकता है। उपर्युक्त इन दो धारणाओं के कारण बौद्धधर्म में प्रार्थना को कोई स्थान ही नहीं मिल सकता है। किंतु फिर भी इसमें प्रार्थना की जाती है। इसकी प्रार्थनाएँ लौकिक वस्तुओं की प्राप्ति के लिए विनती के रूप में नहीं हैं, प्रत्युत् उनमें यह चाहा जाता है कि बुद्ध भगवान् के प्रति तथा उनके उपदेशों के प्रति हमारे मन में श्रद्धा हो। बौद्धधर्म की महायान शाखा में प्रार्थना को 'प्रणिधान' (संस्कृत) या 'पणिधान' (पाली) कहते हैं। 'पणिधान' का अर्थ है मन और इन्द्रियों को वश में करना। इस प्रकार हम समझ सकते हैं कि बौद्धधर्म की प्रार्थना में किसी देवता से कोई याचना नहीं की जाती है, वरन् प्रार्थना करने-वाला भगवान् बुद्ध का स्मरण करके उनके सिखाये हुए धर्म और उपदेशों के प्रति अपने मन में सद्भाव और सत्प्रवृत्ति की प्रेरणा ग्रहण करता है। प्रार्थना के रूप में वह अपने चित्त को शुद्ध करने का प्रयत्न करता है। महायान शाखावाले प्रार्थना में व्याकरण की ओर भी बहुत ध्यान देते हैं।

बौद्धधर्म के समान ही जैनधर्म में भी ईश्वर को सत्ता नहीं मानी जाती है तथा उसमें भी अपने ही कर्मों का फल मुख्य माना जाता है। जैनधर्मवाले यह मानते हैं कि कर्म ही सब कुछ है। इस जन्म में हम सुख या दुःख जो कुछ भी भोग रहे हैं वह हमारे पूर्व जन्मों के कर्म का फल है। उसे हमें अवश्य भोगना पड़ेगा, कोई हमारा सुख या दुःख कम नहीं कर सकता। और इस जन्म में हम जो अच्छे या बुरे काम करेंगे उनका फल हमें आगे चलकर अवश्य भोगना पड़ेगा। उस समय भी हमारे सुख या दुःख को कोई कम न कर सकेगा, और न बढ़ा ही सकेगा। जब किसी में यह शक्ति ही नहीं मानी जाती

कि वह हमारे दुःख को दूर कर सकता है अथवा हमारे सुख को बढ़ा सकता है, तो फिर हम किससे याचना करें और क्यों करें ? ऐसी दशा में जैनधर्म में प्रार्थना का होना संभव नहीं है। कुछ धर्मों में मृतपुरुषों से प्रार्थनाएँ की जाती है, किंतु इस धर्म में वह बात भी नहीं है। जैनी कहते हैं कि मरे हुए व्यक्तियो से अब हमारा कोई संबन्ध नहीं है, तो फिर उनसे प्रार्थना क्या की जाय ! जिस देवी या देवता की कृपा से हम कुछ लाभ उठाते है उसको धन्यवाद देने के लिए भी कभी कभी प्रार्थनाएँ की जाती हैं। किंतु जैनधर्म में तो यह माना जाता है कि हम जो कुछ भी पाते हैं वह सब हमारे पूर्व जन्मों के शुभ कर्मों का ही फल है। तो फिर धन्यवाद किसको दिया जाय ! जैनधर्म मे तीर्थंकर की पूजा की जाती है तथा उनकी मूर्ति और उनके लिए मन्दिर भी बनवाये जाते हैं। किंतु उनकी मूर्ति की पूजा के समय जैनी लोग उनकी मूर्ति से कोई याचना नहीं करते। वे केवल उनके गुणों की सराहना करते है। रात मे स्वाध्याय कर चुकने के पश्चात् जैनी लोग एक श्लोक पढ़ते है जिससे उनकी भावनाओं का पता लगता है। उसका अर्थ नीचे दिया जाता है।

'आत्मा ही उत्पत्ति तथा प्रलय का कारण है। स्वयं यही सुख और दुःख की देनेवाली है। यही मित्र है और यही शत्रु भी है। यही अपनी अच्छी और बुरी दशा का निर्णय करती है। आत्मा कामधेनु के समान है जिससे हम सब इच्छाओं की पूर्ति कर सकते हैं। यही नन्दन वन है।'

यहूदीधर्म में अनेक प्रकार की प्रार्थनाएँ पाई जाती हैं। यह धर्म बहुत पुराना है और समय समय पर इसमें प्रार्थनाओं के संबन्ध में बराबर परिवर्तन होते रहे हैं। इस धर्म में व्यक्तिगत प्रार्थनाओं का प्रचार पहले बहुत कम था, अधिकतर सामूहिक रूप में ही प्रार्थनाएँ होती थीं। कभी कभी परिवार के सब व्यक्ति मिलकर भी प्रार्थना करते थे। इस धर्म के माननेवालो में नित्य प्रति तीन बार प्रार्थना करने का नियम था। विशेष पर्वों और उत्सवों के दिन एक बार और अधिक प्रार्थना की जाती थी। प्रार्थना करने के समय कुछ ऊपरी आडम्बर का भी विधान यहूदीधर्म में पाया जाता था। प्रार्थनाओं में संकुचित दृष्टि नहीं रहती थी, प्रत्युत समस्त देश, जाति और मानव-वर्ग के कल्याण की ओर ध्यान रखा जाता था। प्रार्थनाओं में अच्छे अच्छे भाव और विचार स्थान स्थान पर पाये जाते थे। यहूदीधर्म की प्रार्थना का एक उदाहरण नीचे दिया जाता है। यह प्रार्थना अब भी प्रातःकालीन प्रार्थना में संमिलित है।

'हे अविनाशी ईश्वर ! हमारे ईश्वर, हमारे पुरखो के ईश्वर, आप ऐसी इच्छा करें कि जिससे हम उद्दण्डता से बचे रहें। वह अभी तक हममे नहीं आई है। हम अपने क्रोध से बचे रहें। हम बुरे आदमियों से, बुरे भाग्य से, बुरे विचार से, बुरे साथी से और बुरे पड़ोसी से बचे रहें। हम उस स्वभाव से बचे रहें जो हमारा नाश करनेवाला है। हम निर्दयी न्याय के स्थान से बचे रहें तथा निर्दयी शत्रु से भी बचे रहें, चाहे वह (धार्मिक) यहूदी का ही पुत्र क्यों न हो, अथवा वह अपरिचित ही क्यों न हो।'

किंतु अब यहूदीधर्म की प्रार्थनाओं में नवीन सभ्यता के प्रभाव के कारण बहुत परिवर्तन हो गया है। योरोप और अमेरिका के यहूदियों ने प्राचीन प्रार्थनाओं को बिगाड़-कर उन्हें नये नये साँचों में ढाल दिया है। इन प्रार्थनाओ में रहस्यवाद तथा आधुनिक दर्शनशास्त्र का बड़ा प्रभाव देखने में आता है। अमेरिका के यहूदियो ने प्रार्थनाओ की हिब्रू भाषा को बदलकर उन्हें अंग्रेजी भाषा का रूप दे दिया है। प्रार्थनाओ में अनेकरूपता के आ जाने से यहूदीधर्म की एकरूपता भी नष्टप्राय हो रही है।

ईसाईधर्म मे प्रार्थना का बड़ा भारी स्थान है। इस धर्म में प्रार्थना का महत्त्व इतना अधिक है कि यह कहा जा सकता है कि 'यदि प्रार्थना एक भ्रमात्मक वस्तु समझ ली जाय, तो ईसाईधर्म का अस्तित्व ही संदेह में पड़ जायगा।' इस धर्म का प्रधान ग्रन्थ बाइबिल है। बाइबिल के ओल्ड टेस्टामेंट तथा न्यू टेस्टामेंट दो विभाग हैं। इन दोनों विभागों की प्रार्थनाओं में कुछ भेद दिखाई पड़ता है। ओल्ड टेस्टामेंट (Old Testament) में ईश्वर को एक जीती जागती तथा सब व्यक्तियो से प्रत्यक्ष रूप में संबन्ध रखती हुई शक्ति के रूप में माना है। इसलिए उसमें मनुष्य का ईश्वर के साथ सीधा संबन्ध स्थापित किया गया है। किंतु न्यू टेस्टामेंट (New Testament) मे धर्म संबन्धी प्रोत्साहन देने की ओर अधिक ध्यान दिया गया है। आचरण तथा मनोभावों के सुधार का महत्त्व दोनों में समानरूप से पाया जाता है। दोनों ही यह कहते हैं कि मनुष्य अपनी पवित्रता के द्वारा ईश्वर को प्राप्त कर सकता है। ईसाईधर्म में एक ही ईश्वर माना जाता है, बहुत से देवी देवताओ की कल्पना उसमें नहीं की गई है।। ईश्वर ने ईसा मसीह के रूप में अवतार लिया था और इस प्रकार ईसा मसीह मनुष्य और ईश्वर के बीच मे बिचवानी बन गये है। ईसा मसीह के रूप में ईश्वर मनुष्यजाति के बहुत निकट आ गया है। इस प्रकार ईसा मसीह भी प्रार्थनाओं के पात्र बन गये हैं। ईसाईधर्म में व्यक्तिगत तथा सामूहिक दोनों प्रकार की प्रार्थनाएँ पाई जाती हैं। सामूहिक प्रार्थनाओं की शिक्षा ईसाईधर्म ने यहूदीधर्म से ही ली है। इस धर्म में व्यक्तिगत प्रार्थनाओं को अपने घर में नित्य प्रति करने का विधान है। सामूहिक प्रार्थनाएँ गिर्जाघरों में प्रति रविवार के दिन होती हैं। ईसाईधर्म की प्रार्थनाओं के शब्द ईश्वर के प्रति भक्तिभाव से भरे होते हैं तथा उनमें विनम्रता भी खूब रहती है। अधिकतर लौकिक वस्तुओं की ही प्राप्ति के लिए प्रार्थनाएँ की जाती हैं। ईसाईधर्म के माननेवाले भिन्न भिन्न देशों ने अपनी अपनी भाषाओं में बाइबिल का अनुवाद कर लिया है तथा उनमें ईसाईधर्म की प्रार्थनाएँ भी अपनी अपनी भाषाओं में की जाती हैं।

इस्लामधर्म में भी प्रार्थना का बड़ा महत्त्व है। यहूदी और ईसाईधर्मों के ही समान मुसलमानधर्म में भी नित्य प्रति प्रार्थना करने का नियम बना दिया गया है। इस धर्म में नित्य की प्रार्थना को 'सलात' कहते हैं। नित्य प्रति पाँच बार 'सलात' करने का विधान है—(१) सबेरे, (२) दोपहर मे, (३) तीसरे पहर में, (४) सूर्यास्त के समय तथा (५) रात हो जाने पर। ये सलात चाहे तो मसजिद में करे चाहे अन्य किसी स्थान में। सलात से पहले हाथ पैर धोना जरूरी है। सलात को नमाज भी कहते हैं। नमाज पढ़ते वक्त एक नियम के अनुसार कई बार हाथो को उठाना और फैलाना पड़ता है तथा जमीन पर भी झुकना पड़ता है। ये सलात अकेले भी किये जाते हैं तथा सामूहिक रूप में भी। पर वास्तव में ये व्यक्तिगत प्रार्थना के ही रूप में होते हैं। मुसलमानधर्म की सामुहिक प्रार्थना शुक्रवार के दिन होती है। यह प्रार्थना नगर या गाँव की सबसे बड़ी मसजिद में होती है जहाँ पर कि सब प्रार्थना करनेवाले मुसलमान इकट्ठा होते है। यदि नगर बहुत बड़ा है, जिससे सब लोग मसजिद में नहीं इकट्ठा हो सकते, तो यह प्रार्थना अनेक प्रधान मसजिदो में की जाती है। किंतु सब मसजिदों में यह प्रार्थना नहीं की जाती है। इस प्रार्थना को 'सलात अलजुमह' अर्थात् शुक्रवार की सलात कहते हैं। यह ठीक दोपहर के समय की जाती है और इसके बाद फिर नित्य की दोपहरवाली नमाज पढ़ी जाती है। यह समझ लेना चाहिए कि नित्य की सलातों से यह सलात पृथक् होती है तथा इसका विधान भी दूसरे ढंग का होता है। ऐसी सामूहिक प्रार्थनाओं में एक अग्रकर्ता होता है जिसका सब लोग अनुकरण करते हैं। उसे इमाम कहते हैं। इन प्रार्थनाओं के

अतिरिक्त पर्वों और उत्सवों के अवसर पर भी विशेष प्रार्थनाएँ की जाती है जो प्रायः शुक्रवार के दिन की प्रार्थना से मिलती जुलती है। सभी प्रार्थनाएँ मक्का की ओर मुँह करके की जाती है। मुसलमानधर्म मे एक ही ईश्वर माना जाता है और वह भी निराकार माना जाता है। अतः इस धर्म की प्रार्थनाओं में उसी एक ईश्वर की बड़ाई की जाती है। प्रार्थनाओं में सकाम भाव बहुत कम रहता है, किंतु प्रार्थना करनेवालो के मन मे किसी वस्तु की कामना का रहना असंगत नही माना जाता है।

• **हिंदूधर्म** की प्रार्थनाओं के संबन्ध मे कुछ भी लिखना बहुत कठिन है। इस धर्म के अन्तर्गत इतने अधिक मत और संप्रदाय प्रचलित है और उन सबकी प्रार्थनाएँ इतने भिन्न रूपों में होती हैं कि बिना उनका अलग अलग वर्णन किये काम नही चल सकता। किंतु इस लेख के भीतर ऐसा कर सकना असंभव है। साधारणतः हम केवल इतना ही कह सकते है कि हिंदूधर्म के अधिकांश सप्रदायो मे बहुदेव उपासना[1] प्रचलित है तथा मूर्तिपूजा का भी प्रचार है। जप के रूप में भी हिंदूधर्म मे बहुत अधिक प्रार्थना की जाती है। सकाम भाव तथा निष्काम भाव दोनो रूपो मे प्रार्थना करने का चलन है। किंतु साधारण लोग लौकिक वस्तुओं की प्राप्ति तथा मरने के पश्चात् अच्छे अच्छे सुखों की प्राप्ति के उद्देश्य से ही प्रार्थना करते है। आत्म-शुद्धि के लिए भी प्रार्थना करने का रिवाज हिंदूधर्म में कम नहीं है। ईसाई और मुसलमानधर्मों के समान सामूहिक रूप से प्रार्थना करने का रिवाज हिंदूधर्म मे नही है। हाँ, मन्दिरो मे दर्शन और पूजन के लिए बहुत से लोगो का इकट्ठा होना सामूहिक रूप से पूजा कही जा सकती है। बहुत से लोगो का इकट्ठा होकर भगवान् के गुणों का गान करना भी सामूहिक प्रार्थना ही है। हिंदूधर्म मे भूत प्रेतों तथा मृत पुरुषों के लिए भी प्रार्थनाएँ की जाती है। किंतु हिंदूधर्म की वास्तविक प्रार्थना की भावना हमे इसी रूप मे दिखाई पड़ती है, जब हम एक सच्चे और निष्काम भक्त को संसार की प्रत्येक वस्तु मे परमात्मा का दर्शन करके मग्न होते हुए पाते है। परमात्मा के शुद्ध स्वरूप मे सच्ची भक्ति करना ही हिंदूधर्म के अनुसार उत्तम प्रार्थना है।

१. हिंदुओं के बड़े बड़े सप्रदायों में तो बड़ा उग्र एकेश्वरवाद है, पर पश्चिमवाले उन्हें देववादी समझते हैं। —सं०

कर्मकाण्ड और भजन

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः॥

पति का भजन

(ले०—श्रीमती भगवती बाई)

पतीव्रता के धर्म को, सखि निज उर में धार।
भवसागर से शीघ्र ही, हो जावेगी पार॥
भय मत कर री 'भगवती', त्याग अन्य सब अर्थ।
तू निज उर में भजन कर, वह 'पति' सर्व समर्थ॥

ईश्वर का भजन करना ही मनुष्यजीवन का सबसे बड़ा लक्ष्य है, पर हमें इस लक्ष्य को पाने के लिए कई उपायों का सहारा लेना पड़ता है, मूर्तिपूजा, नामजप, पाठ, यज्ञ, तप आदि ये सभी साधन बड़े कठिन हैं, अतः सभी मनुष्य एक न एक सहज उपाय की खोज में रहते हैं। स्त्रियाँ बेचारी तो अपनी गृहस्थी में इतनी व्याकुल रहती हैं कि वे चाहती हैं कि सीधे और सहज उपाय से ही भगवान् का भजन हो जाय। उसके लिए ऋषियों मुनियों ने एक उपाय बता दिया है—वह है ईश्वरभावना से पति को मानना। सहज में ही संसारी काम ईश्वरीय काम बन जाते हैं। यही पति का भजन है।

बड़ी सुन्दर सलाह है, बहिनो! खाओ पीओ, खिलाओ पिलाओ, केवल ईश्वर का भाव मत भूलो। अपनी सारी गृहस्थी में भगवान् की गृहस्थी देखो और घर के पति को पति परमेश्वर समझो।

गृहस्थी सँभालने के बारे में मैं कविवर कालिदास की कुछ पङ्क्तियाँ नीचे लिख देती हूँ—

वधू को धर्मोपदेश

शुश्रूषस्व गुरून्, कुरु प्रियसखीवृत्तिं सपत्नीजने,
भर्तुर्विप्रकृतापि रोषणतया मास्मप्रतीपं गमः।
भूयिष्ठं भव दक्षिणा परिजने भाग्येष्वनुत्सेकिनी,
यान्त्येवं गृहिणीपदं युवतयो वामा कुलस्याधयः॥

—कालिदास

शा० चतुर्थ अं० १० श्लो०

१. बड़ों की शुश्रूषा करना—वे जो कुछ कहें उसे सुनना और उसका पालन करना।

२. अपनी सपत्नियों तथा बराबरी की ननद, देवर, देवरान, जेठान आदि से सखी जैसा मीठा और स्नेह-भरा व्यवहार करना।

३. पति से प्यार तो सदा मिलता है, पर कभी झगड़ा भी हो जाता है। ऐसे झगड़े के अवसर पर क्रोध आता है। उस क्रोध को जीतने और दबाने से ही जीवन में संयम आता है। कभी भी भूलकर ऐसे क्रोध के समय में पति के विरुद्ध कोई काम नहीं करना चाहिए। पति गलती भी करे, तो हम क्यों गलती करें—यही भाव सदा मन में रखना चाहिए।

४. अपने नौकर चाकरों और चारों ओर के लोगों से सदा ऐसा व्यवहार करना चाहिए जिससे वे तुम्हारा उपकार और आभार माना करें। अपने कार्यों से सदा उन्हें प्रसन्न रखना चाहिए।

५. जब भाग्य बढ़ता रहे, सुहाग का सुख मिले, घर और परिवार धन धान्य से भर उठे उस समय एक बात का ध्यान रखे कि 'कभी फूल नहीं उठना।' भोग विलास में भी सदा दूसरों का ध्यान रखना चाहिए। और 'सबै दिन जात न एक समान' वाली कहावत का मनन करना चाहिए।

इस प्रकार जो बहुएँ अपने व्यवहार से गुरुजन, पति, सखी सहेली, परिजन आदि सबको प्रसन्न रखती हैं वे गृहिणीपद प्राप्त करती हैं—उनका घर बस जाता है, वे घर की लक्ष्मी बन जाती हैं, वे घर की मालकिन (गृहिणी) हो जाती हैं। पर जो इसके उलटे चलती हैं वे घर का रोग बन बैठती हैं, वे स्वयं दुखी रहती हैं और दूसरों को भी दुःख देती हैं।

भजन

पर

प्रश्नोत्तर

(ज्ञानतपस्वी श्री गीतानन्दजी से)

प्रश्न—गीता के अनुसार भगवद्भजन कैसे किया जाय ?

उत्तर—भजन करनेवाले को भक्त कहते हैं। इसलिए प्रश्न का अर्थ हुआ—भक्ति कैसे करनी चाहिए। भगवान् की भक्ति चार प्रकार से की जा सकती है। गोकि गीता में यह नहीं कहा है कि भक्ति के चार भेद हैं, लेकिन यह जरूर कहा है कि—

चतुर्विधाः भजन्ते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन ।

—गी० ७।१६

(हे अर्जुन ! सुकृतीजन मुझे चार प्रकार से भजते हैं।)

उपर्युक्त चार प्रकार यों हैं—(१) आर्ति, (२) जिज्ञासा, (३) अर्थार्थित्व और (४) ज्ञान। यथा—

आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ ॥

—गी० ७।१६

प्रश्न—कृपया प्रत्येक के लक्षण समझाइए।

उत्तर—दूसरे अध्याय के सातवें श्लोक में चारों के लक्षण दिये हैं। यथा—

कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः
पृच्छामि त्वां धर्मसंमूढचेताः ।
यच्छ्रेयः स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे
शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम् ॥

(कार्पण्यदोष से दबे हुए (नष्ट हुए) स्वभाववाला और धर्म का निर्णय करने में मोहित चित्त हुआ, मैं आपसे निश्चित की हुई श्रेय की बात पूछता हूँ, वह मुझे बतलाइए। मैं आपका शिष्य हूँ। अपने शरण मे आये हुए मुझ दास को शिक्षा—शास्त्रोपदेश—दीजिए।)

इसी में क्रम से चारों के लक्षण कहे गये हैं। चारों का सामान्य लक्षण भी पहले कहा गया है कि—जनों (भक्तों) को 'सुकृती' होना पहले आवश्यक है, तदनन्तर वे चार प्रकार से भगवद्भजन कर सकते हैं। विशेष लक्षण यों है—आर्त भक्त 'कार्पण्यदोषोपहतस्वभाव' होता है अर्थात् जब भक्त का स्वभाव कार्पण्यदोष से उपहत (दबा) रहता है। इस कार्पण्यदोष को भगवान् ने यों बतलाया है कि—

कृपणाः फलहेतवः ।

—गी० २।४६

(अर्थात् जो फल के निमित्त कार्य करता है वही कृपण है।) इसी दोष को कार्पण्य कहते हैं। अर्जुन में भी यही दोष था, लेकिन जब उसने अपना दोष मंजूर कर लिया, तो तात्पर्य यह है कि वह इससे छूटकर भगवान् की शरण में जाना चाहता है अपने कार्पण्यदोष से वह ऊब उठा है। प्रत्येक आर्त भक्त के अंदर ऐसे ही भाव होने चाहिएँ। इसी भक्ति को गीता के अनुसार आर्ति कहा गया है।

आर्ति अवस्था के बाद ही जिज्ञासा का पर्याय आता है। इस अवस्था में भक्त उसी विपत्ति से छूटने का मार्ग पूछता है, क्योंकि उसका चित्त धर्म में मूढ़ हुआ रहता है। अतः धर्मजिज्ञासा की इसी अवस्था को 'जिज्ञासा' के नाम से कहा गया है। ऊपर के श्लोक में भी अर्जुन ने यही किया है। वह कहता है—

'पृच्छामि त्वां धर्मसंमूढचेताः'

—गी० २।७

यहाँ पता चलता है कि अर्जुन दूसरी सीढ़ी पर आ गया। यही दशा प्रत्येक भक्त की होती है।

इसके बाद अर्थार्थी भक्त का दर्जा है। अभी तक तो पता चलता है कि भक्त के अंदर से फल की इच्छा चली गई। वह कार्पण्यदोष से छूटना चाहता है। लेकिन फिर भी वह क्या चाहता है, यही ऊपर के श्लोक की तीसरी पङ्क्ति—

'यच्छ्रेयः स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे'

गी० २।७

से मालूम पड़ता है।

अर्थात् वह प्रेय को छोड़कर श्रेय चाहता है। यही अर्थार्थी भक्त की अवस्था है। (अर्थ=पुरुषार्थ।)

ये तीनों अवस्थाएँ अर्जुन में आ चुकी थीं। वह भक्ति की तीन सीढ़ियाँ पार कर चुका था, लेकिन अभी चौथी ज्ञान की सीढ़ी तक नहीं पहुँचा था। इससे स्पष्ट है कि श्रेय की अवस्था भी सर्वोच्च नहीं है। अभी लक्ष्य से उस अवस्थावाला भक्त नीचे ही है। हाँ, गीता सुनने के लिए इन तीन अवस्थाओं को पहले पार कर लेना पड़ता है। अस्तु;

'शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम्'

—गी० २।७

इसमें ज्ञानी भक्त का अधिकार कहा गया है। क्योंकि उसमें इन बातों का होना जरूरी है। जैसे नीचे के श्लोक में भी कहा है—

'तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया'

—गी० ४।३४

(उस ज्ञान को प्रणिपात (प्रणाम) करके, प्रश्न करके और सेवा करके जानना चाहिए।)

अर्जुन ने जो 'शिष्यस्तेऽहं' कहा वही प्रणिपात है। 'शाधि मां' कहकर अर्जुन ने प्रश्न किया अर्थात् उसने शास्त्र क्या कहता है, यही पूछा; (शाधि का अर्थ 'शास्त्र सिखाइए' होता है) यही परिप्रश्न हुआ और 'त्वां प्रपन्नम्' द्वारा यही बतलाया गया है कि भक्त सेवा में आ गया। आत्मसमर्पण से बढ़कर दूसरी सेवा क्या हो सकती है?

इस प्रकार ऐसी अवस्था में पहुँच जाने पर ही कोई भक्त 'ज्ञान' का अधिकारी हो सकता है।

प्रश्न—महाराज यह नहीं स्पष्ट हुआ कि 'ज्ञान' क्या है?

उत्तर—ज्ञानी का लक्षण है कि वह नित्ययुक्त हो, उसमें एक भक्ति और भगवान् का अत्यर्थ (अत्यन्त एकान्त) प्रेम हो। कहा है—

तेषां ज्ञानी नित्ययुक्त एकभक्तिर्विशिष्यते।
प्रियो हि ज्ञानिनोऽत्यर्थमहं स च मम प्रियः॥

—गी० ७।१७

(उन चार प्रकार के भक्तों में ज्ञानी सदा मुझमें स्थित होने के कारण और केवल मुझमें ही भक्ति रखने के कारण सर्वश्रेष्ठ है और मुझे प्रिय है।)

'नित्ययुक्त' का तात्पर्य है कि वह हमेशा युक्त ही काम करता है अर्थात् कर्मयोगी है। एक भक्ति का भाव है कि वह तपोयोगी है। इसी प्रकार

अत्यर्थं प्रेम का अर्थ है कि वह ज्ञानयोगी है। इस प्रकार यहाँ कर्म, भक्ति, और ज्ञान तीनों का समन्वय है। अर्थात् ज्ञानी में ये तीनों ही बातें होनी चाहिएँ।

भगवान् ने इस अवस्था को बड़ा महत्त्व दिया है। यों तो वह कहते ही हैं कि 'उदाराः सर्व एवैते' अर्थात् ये चारों ही भक्त उदार हैं—कार्पण्यदोष से रहित हैं, लेकिन—

'ज्ञानी त्वात्मैव मे मतम्'

—गी० ७।१८

ज्ञानी तो मेरी आत्मा ही है।

तात्पर्य यह कि और तीनों वस्तुतः अज्ञानी ही हैं। ज्ञानी ही भगवान् को ठीक समझ सका है। उनका ही रूप हो गया है। दूसरे द्वैतभावापन्न हैं और यही अद्वैतावस्था को पहुँच गया है। ज्ञानी भगवान् को ही परम गति समझता है, इसी लिए वह आत्मा है—

आस्थितः स हि युक्तात्मा मामेवानुत्तमां गतिम्।

—गी० ७।१८

भक्त इस अवस्था को अनेक जन्मों के बाद पहुँचता है और वह बहुत दुर्लभ भी है—

बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान् मां प्रपद्यते।
वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः॥

—गी० ७।१९

प्रश्न—आपने भक्त के लिए जो 'सुकृती' होना आवश्यक बतलाया है, इससे कृपया इस शङ्का का भी निवारण कर दें कि 'सुकृती' किसे कहते हैं?

उत्तर—गीता में सुकृती का भी लक्षण कहा है—

न मां दुष्कृतिनो मूढाः प्रपद्यन्ते नराधमाः।
माययापहृतज्ञाना आसुरं भावमाश्रिताः॥

—गी० ७।१५

(जो पाप करनेवाले, मूढ और नराधम हैं, जिनका ज्ञान माया द्वारा छीन लिया गया है, इस प्रकार के आसुरी भावापन्न मनुष्य मुझ परमेश्वर की शरण में नहीं आते।)

तात्पर्य यह कि सुकृती में ऊपर के दोष नहीं होने चाहिएँ। उसके अंदर आसुरभाव नहीं होने चाहिएँ। उसे 'दुष्कृती' न होना चाहिए। लेकिन यह उत्तर तो निषेध द्वारा हुआ। सुकृती का सीधा लक्षण यह है-(सु = सद्, कृती = कर्म करनेवाला)। सत्कर्म क्या है, इसे भी समझ लेना चाहिए। सद् का अर्थ है—

सद्भावे साधुभावे च सदित्येतत्प्रयुज्यते।
प्रशस्ते कर्मणि तथा सच्छब्दः पार्थ युज्यते॥
यज्ञे तपसि दाने च स्थितिः सदिति चोच्यते।
कर्म चैव तदर्थीयं सदित्येवाभिधीयते॥

—गी० १७।२६-२७

(हे अर्जुन, सत्यभाव और श्रेष्ठभाव में 'सत्' का प्रयोग किया जाता है। उत्तम कर्म में भी 'सत्' शब्द का प्रयोग किया जाता है। यज्ञ, तप और दान में स्थिति 'सत्' कही जाती है और उस (यज्ञादि) के अर्थ किया हुआ कर्म भी 'सत्' ही कहा जाता है।)

अर्थात् सुकृती में सद्भाव साधुभाव आदि गुण होने चाहिएँ। यह अवस्था बड़ी कठिनाई से प्राप्त होती है। इसे प्राप्त करने के उपरान्त ही कोई भक्त हो सकता है।

गीता में सत्कर्म के इन पाँचों भावों की भी चतुर्थ अध्याय में व्याख्या मिलती है। प्रत्येक भाव के लिए मनुष्य में कौन कौन से लक्षण होने चाहिएँ, यही नीचे बतलाया जाता है—

सद्भाव—

यस्य सर्वे समारम्भाः कामसंकल्पवर्जिताः ।
ज्ञानाग्निदग्धकर्माणं तमाहुः पण्डितं बुधाः ॥

—गी० ४।१९

(हे अर्जुन, जो संपूर्ण कर्मों को बिना कामना के करते हैं और जिनके संपूर्ण कर्म ज्ञानरूपी अग्नि से जल गये हैं, उन्हीं को ज्ञानी पुरुष पण्डित कहते हैं ।)

साधुभाव—

त्यक्त्वा कर्मफलासंगं नित्यतृप्तो निराश्रयः ।
कर्मण्यभिप्रवृत्तोऽपि नैव किञ्चित्करोति सः ॥

—गी० ४।२०

(जो कर्मफल की इच्छा नहीं करता और न उनमें आसक्ति रखता है, तथा किसी का आश्रय न कर सदा संतुष्ट रहता है, वह सब कर्म में प्रवृत्त रहकर भी कुछ नहीं करता ।)

प्रशस्त कर्म—

निराशीर्यतचित्तात्मा त्यक्तसर्वपरिग्रहः ।
शारीरं केवलं कर्म कुर्वन्नाप्नोति किल्विषम् ॥

—गी० ४।२१

(जो संपूर्ण आशाओं को छोड़कर आत्मा को वशीभूत किये हुए सब संसारी झगड़ों से अलग रहता है और केवल शरीर से कर्म करता है, वह पाप का भागी नहीं होता ।)

स्थिति—

यदृच्छालाभसंतुष्टो द्वन्द्वातीतो विमत्सरः ।
समः सिद्धावसिद्धौ च कृत्वाऽपि न निबद्ध्यते ॥

गी० ४।२२

(हे अर्जुन, जो अपने आप मिली हुई वस्तु पर संतोष करता है, दुःख, सुख, हानि और लाभादि द्वन्द्वों से जिसके मन में वेदना या प्रसन्नता नहीं होती, जो किसी से वैर नहीं करता है, जिसकी सिद्धि और असिद्धि में समान बुद्धि है, वह कर्म करके भी कर्मबन्धन में नहीं बँधता है ।)

तदर्थीय—

गतसंगस्य मुक्तस्य ज्ञानावस्थितचेतसः ।
यज्ञायाचरतः कर्म समग्रं प्रविलीयते ॥

—गी० ४।२३

(जो स्त्री पुत्रादि की ममता से छूट गया है, सांसारिक विषयवासना से दूर हो गया है और ज्ञान में जिसका चित्त स्थित है, वह यज्ञ के लिए जो कर्म करता है, वे सब कर्म वासना सहित विलीन हो जाते हैं ।)* सद्भाव आदि की निषेध मुखेन व्याख्या गी० २।४२, ४३, ४४ में की गई है । विस्तारभय से यहाँ नहीं दी गई है ।

प्रश्न—यह तो आपने परम उत्कृष्ट (अर्थात् देवदेव) के भजन का उपदेश किया है । दूसरे शब्दों में कहना चाहिए—'यह निष्काम भक्तों का भजन है ।' किंतु सांसारिक जन इतने निष्काम नहीं हैं । वे तो किसी देवविशेष का सकाम भजन करते हैं; अतः यह भी बतलाइए कि क्या गीता में कहीं उस प्रकार की अपर कोटि (साधारण) के भजन का

*यहाँ हमारे पाठकों के मन में संदेह हो सकता है कि उपर्युक्त लक्षणों को ही क्यों अमुक अमुक भाव माना जाय ? इसका समाधान करने में एक तो विषयान्तर हो जायगा, दूसरे लेख भी बहुत लंबा हो जायगा, अतः किसी आगामी संख्या में इसका उत्तर संभव हुआ तो दिया जायगा ।

—सं०

उल्लेख है ? यदि है, तो उसकी विधि और फल भी बतलाने की कृपा करें।

उत्तर—हाँ, इसका भी उल्लेख है; और वह गीता के चौथे अध्याय के बारहवें श्लोक में है। भगवान् कहते हैं—

काङ्क्षन्तः कर्मणां सिद्धिं यजन्त इह देवताः।
क्षिप्रं हि मानुषे लोके सिद्धिर्भवति कर्मजा॥

(मनुष्यलोक में कर्म की सिद्धि शीघ्र ही होती है और मुक्ति कठिनता से मिलती है। इससे संसार में जो लोग कर्म की सिद्धि चाहते हैं वे (इन्द्रादि) देवताओं की उपासना करते हैं।)

अध्याय सात के बीसवें श्लोक में भी इसी बात का उल्लेख है। यथा—

कामैस्तैस्तैर्हृतज्ञानाः प्रपद्यन्तेऽन्यदेवताः।
तं तं नियममास्थाय प्रकृत्या नियताः स्वया॥

(अपनी अपनी प्रकृति के अनुसार मनुष्य धन, स्त्री, पुत्रादि लौकिक कामनाओं से अज्ञान मे पड़कर उन फलों की चाहना से अन्य देवताओं की उपासना करते हैं।)

इस प्रकार के भजनको गीता में श्रेष्ठ नहीं माना गया है। अतः इसका कोई विधान भी नहीं दिया गया है। उसकी तो नाना देव होने से नाना विधियाँ हैं, जो अन्यत्र मिलेंगी। गीता में उनका वर्णन कहाँ तक किया जा सकता है ? उसमें तो थाड़ा सा विधान और फल का निर्देशमात्र कर दिया गया है। यथा—

कामैस्तैस्तैर्हृतज्ञानाः प्रपद्यन्तेऽन्यदेवताः।
तं तं नियममास्थाय प्रकृत्या नियताः स्वया॥
यो यो यां यां तनुं भक्तः श्रद्धयार्चितुमिच्छति।
तस्य तस्याचलां श्रद्धां तामेव विदधाम्यहम्॥
स तया श्रद्धया युक्तस्तस्याराधनमीहते।
लभते च ततः कामान् मयैव विहितान् हि तान्॥
अन्तवत्तु फलं तेषां तद्भवत्यल्पमेधसाम्।
देवान् देवयजो यान्ति मद्भक्ता यान्ति मामपि॥

—गी० ७।२०-२३

(हे अर्जुन! अपनी अपनी प्रकृति के अनुसार मनुष्य, धन, स्त्री, पुत्रादि लौकिक कामनाओं से अज्ञान में पड़कर उन उन फलों की चाहना से अन्य देवताओं की उपासना करते हैं। हे अर्जुन! जो मनुष्य श्रद्धापूर्वक जिस जिस देवता के पूजन की इच्छा करता है, उन पुरुषों की उस श्रद्धा को मैं ही देवताओं में दृढ कर देता हूँ। मुझसे दृढ की गई उस श्रद्धा के अनुसार वह पुरुष उस देवता की आराधना करता है और उसकी कृपा से अपने मनोरथ को प्राप्त होता है। उन मनोरथों को पूर्ण करनेवाला यद्यपि मैं ही हूँ, परंतु उन अल्प बुद्धिवालों की कामना से प्राप्त होने के कारण वह फल शीघ्र ही नष्ट हो जाता है। जो और देवताओं का पूजन करते हैं वे और देवताओं को प्राप्त होते हैं, और जो मेरा पूजन करते हैं, वे स्वयं मुझसे मिलते हैं।)

प्रश्न—क्या इस प्रकार के भक्तों के भजन का भी परमात्मा से कोई संबन्ध है ? क्योंकि इनके भजनीय देवताओं के तो भगवान् देव हैं।

उत्तर—गीता कहती है कि अन्य देवों का भजन भी मेरा ही भजन है, लेकिन वह अविधिपूर्वक भजन है (विधियुक्त तो वही आर्त, जिज्ञासु, अर्थार्थी और ज्ञानियों का भजन होता है)। नीचे के श्लोक से यह बात प्रमाणित होती है—

येऽप्यन्यदेवताभक्ता यजन्ते श्रद्धयान्विताः।
तेऽपि मामेव कौन्तेय यजन्त्यविधिपूर्वकम्॥

—गी० ९।२३

(हे कौन्तेय! जो अन्य देवताओं की भक्ति श्रद्धा करके अपने अपने उन उन इष्टदेवों की उपासना करते हैं, वे अविधिपूर्वक मेरी ही पूजा करते हैं।)

प्रश्न—अच्छा, तो विधिपूर्वक यजन कैसे होता है ?

उत्तर—गी० १७।२३, द्रष्टव्य।

भजन का प्रभाव

(ले०—श्री सत्यस्वरूप शास्त्री)

भक्ति भगवत्प्राप्ति का एकमात्र साधन है। भगवान् स्वयं कहते हैं **"भक्त्या लभ्यस्त्वनन्यया"**—अनन्य भक्ति से मिलता हूँ। भक्ति और भजन दोनों शब्दों में एक ही धातु (भज सेवायाम्) और एकार्थक (भावार्थक) प्रत्यय हैं। परंतु शब्दप्रयोग में कुछ भेद हो गया है।

"श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम्।
अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम्॥"

इन आठों क्रियाओं की भक्ति कीर्तन और स्मरण की भजन नाम से अधिक प्रसिद्धि है। इस भजन-रूप भक्ति का मन और बुद्धि, शरीर और समाज पर बड़ा कल्याणकारी प्रभाव पड़ता है। शास्त्रों, पुराणों और भक्तजनो की वाणी में सब साधनों से भजन की ही उत्कृष्टता बताई गई है।

भगवत्प्राप्ति के लिए भजन अत्यन्त उत्कृष्ट, सरलतम और सुनिश्चित साधन है। जिन अधम जीवो के उद्धार की कोई आशा न रही हो, जिनका मन दुर्वासनाओं और शरीर दुराचारों का अड्डा बन गया हो, जो आत्मोन्नति के एकमात्र आधार आचार को खो चुके हो, उनके लिए क्या उपाय है? शास्त्र उत्तर देते हैं **'आचारहीनं न पुनन्ति वेदाः'** आचारहीन को वैदिक कृत्य पवित्र नहीं करते। ठीक है, कानून खूनी को प्राणदण्ड देगा। परंतु यदि सम्राट् प्रसन्न हो जाय, तो क्या माफी नहीं मिलती? भगवान् सम्राटों के सम्राट् हैं, दयालु हैं; आर्त, जिज्ञासु, अर्थार्थी कोई भी पुकार करे वे उन्हें अपनाते हैं। वे पतितों का भी उद्धार करते हैं, इसलिए उनका नाम पतितपावन है। वे स्वयं घोषणा करते हैं:—

"अपि चेत् सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक्।
साधुरेव स मन्तव्यः सम्यक् व्यवसितो हि सः॥"
—गी० ९।३०

जैसे अग्नि का जलाना धर्म है, वैसे हरिभजन का पापों का नाश करना स्वाभाविक धर्म है—

"हरिर्हरति पापानि दुष्टचित्तैरपिस्मृतः।
अनिच्छयापि संस्पृष्टो दहत्येव हि पावकः॥"

हरि दुष्टों को भी अपनाते हैं, भजन ही केवल ऐसा साधन है जिससे पतित भी पवित्रता और दुराचारी भी साधुता प्राप्त कर सकता है।

भजन केवल गये गुजरों का ही मार्ग नहीं। **'ईश्वरप्रणिधानाद्वा'** इस योगसूत्र में भगवान् पतञ्जलि ने ईश्वरप्रणिधान को योगसाधनासंलग्न साधकों के लिए समाधिप्राप्ति का प्रधान साधन कहा है। ईश्वर के नामप्रणव का उच्चारण और उसका स्मरण प्रणिधान है। इस सूत्र के भाष्य में व्यास लिखते हैं:—**'भक्तिविशेषादावर्जित ईश्वरस्तमनुगृह्णाति'** अर्थात् उस वाचिक (जप) और मानसिक (स्मरण) भजन से आकृष्ट भगवान् साधक पर अनुग्रह करते हैं। आगे के सूत्र में इसका फल बताया है:—**"ततः प्रत्यक् चेतनाधिगमोऽपि अन्तरायाभावश्च"** इस (ईश्वरभजन) से पुरुषख्यातिरूप समाधिप्रज्ञा होती है और व्याधि, स्त्यान (अकर्मण्यता), संशय, प्रमाद और आलस्य आदि अन्तरायों (विघ्नों) का अभाव होता है। इससे स्पष्ट है कि भजन का साधक के मन और बुद्धि के अतिरिक्त शरीर पर भी कैसा कल्याणकारी प्रभाव पड़ता है।

भगवान् भजन करनेवाले के साथ रहते हैं। गीतगोविन्द का जंगलों में गाना राजाज्ञा से बंद कर दिया गया था, क्योंकि जगन्नाथ की मूर्ति के वस्त्र झाड़ियों में फँसकर फट गये थे। जहाँ भगवान् का कीर्तन होता है, वे वहीं उपस्थित होते हैं। उन्होंने स्वयं आदि भक्त नारदजी को कहा है—

"नाहं वसामि वैकुण्ठे योगिनां हृदये न च।
मद्भक्ताः यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद!"

इसी कारण से भक्तशिरोमणि नारदजी ने अपने प्रसिद्ध भक्तिसूत्रों में लिखा है—"**स कीर्त्यमानः शीघ्रमेवाविर्भवति अनुभावयति भक्तान्**" ईश्वर कीर्तन करने से शीघ्र ही आविर्भूत होकर अनुग्रह करते हैं। भजन का प्रभाव मनुष्य पर एक ही काल में कई रूपों में पड़ता है। भगवद्धर्म के प्रधान ग्रन्थ श्रीमद्भागवत में कहा है:—"जैसे भोजन करने से पुरुष को हर एक कौर खाने पर एक साथ ही सुख मिलता है, पेट भरता है, और भूख मिटती है; वैसे ही प्रत्येक पल में हरिकीर्तन से भक्त की भक्ति बढ़ती है, हृदय में प्रेम के लक्ष्य भगवान् का उदय होता है और अन्य वस्तुओं से विरक्ति होती है। (श्री म० भा० ११-२-४२) इत्यादि पौराणिक प्रमाणों से हरिकीर्तन की सर्वसाधनों से उत्कृष्टता प्रमाणित होती है।

यद्यपि शास्त्रों में आत्मोन्नति के अनेक साधन बताये हैं, परंतु कलियुग में और साधनों का अनुष्ठान अशक्य है, अतः भजन ही एकमात्र उपाय है। औषधियों में रस, राजाओं में वीरता, ब्राह्मणों में विद्या का ह्रास हो गया। जनता में श्रद्धा नहीं रही। भारत पर सदियों से शत्रुओं के आक्रमण हुए। पराधीनता आई। साथ ही उसके फल कायरता, अविद्या और अकर्मण्यता भी पधारे। अलौकिक विद्याएँ और सद्ग्रन्थ लुप्त हो गये। अत्याचारों की मात्रा बढ़ती गई। लोग सहते गये। आखिर अत्याचारों से पीड़ित बूढ़ा भारत भक्तों के आर्तनाद में भगवान् से सहायता के लिए पुकार उठा। भक्तों ने अपनी वाणी में ईश्वर को धर्मरक्षक, भक्तवत्सल आदि संबोधनों से जनता को उत्साह दिया कि गज, सुग्रीव और द्रौपदी की तरह भगवान् हमारी सहायता करेंगे। ईश्वर का नाम ही हमारा उद्धार करेगा। इससे हिंदूजाति की धार्मिक भावना व्यवस्थित हो गई। भक्तों ने अपनी वाणी में नाम की महिमा गाई। कबीर ने कहा—जब तक हमे राम याद रहेगा, हमें कोई अपवित्र नहीं कर सकता। एक बार नामोच्चारण से "**देही कितकी वापरी पवितर होइगो ग्राम**" देह बिचारी क्या, राम का नाम लेते ही ग्राम पवित्र हो जायगा। महात्मा तुलसीदासजी ने कहा—"**कलियुग योग न यज्ञ न ज्ञाना। एक आधार रामगुनगाना।**" तर्कशास्त्र के अध्ययन के बाद महाप्रभु चैतन्य ने फैसला दिया।

"हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामैव केवलम्।
कलौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा।"

कलियुग में हरिनाम के सिवा और कोई मार्ग नहीं। गुरु नानक आदि दस गुरुओं के सिद्धान्त का निचोड़ एक ही पङ्क्ति में है "**सर्वरोग को औषध नाम।**" यह थी सब भक्तों की धारणा। समय के फेर से दुनिया के सब व्यवहार में परिवर्तन होता रहता है, परंतु आध्यात्मिक भावनाओं में परिवर्तन का प्रभाव कम पड़ता है। वही सत्य, धर्म, प्रार्थना, सहानुभूति और दया आदि के भाव सब समाजों में बहुत काल से एक जैसे ही चले आये हैं, और चलते रहेंगे। प्रायः सब धर्मों में ईश्वरप्रार्थना का महत्त्व माना जाता है। जब किसी समाज या व्यक्ति पर विपत्ति आ पड़े, तो भजन का पूर्ण महत्त्व उसे ज्ञात होता है। किसी शायर ने कहा है—

"जब मायूसी दिलों पै छा जाती है।
दुश्मन से भी नाम तेरा जपवाती है॥"

हजरत मोहम्मद साहब
और
उनका सर्वश्रेष्ठ भजन 'कलमा'

(ले० — शाह श्री अब्दुल अलीम सिद्दीकी)

इतिहास पढ़ने से हमें यह बात स्पष्ट विदित हो सकती है कि प्रत्येक देश में ईश्वर की प्रेरणा से शुद्ध तथा पवित्र आत्मा उत्पन्न होती हैं। वे लगन के साथ ईश्वरभजन में मग्न होकर जहाँ अपने जीवन को सफल बनाती हुई मोक्षाधिकारिणी बनती हैं, वहीं वे अन्य लोगों को भी अपने सदुपदेशों से ईश्वरभक्ति का प्याला पिलाने की चेष्टा करती हैं। महात्मा बुद्ध, ईसा, मूसा, दाऊद, सुकरात, पाइथागोरस आदि इस बात के ज्वलन्त प्रमाण हैं। इसी प्रकार हमारे धर्म के पूज्य प्रवर्तक दीन इस्लाम के सूर्य हजरत श्री मोहम्मद साहब अति ईश्वरभक्त और प्रभु अनुरागी थे। आपका कलमा ही इस बात की गवाही देता है कि आप ईश्वरपूजा के अतिरिक्त और किसी की भी पूजा व्यर्थ बतलाते हैं। देखिए—

'लाइलाहाइललल्लाह।'

(अल्लाह के सिवा कोई पूजने योग्य नहीं है।) यही कलमा हर समय आपकी जिह्वा पर मौजूद रहता था।

आपके विषय में रवायत है कि आप कोहे हिरा में जाकर हर समय खड़े होकर इतनी उपासना तथा ईश-भक्ति करते थे कि आपके पैरों पर वरम (सूजन) आ जाता था। आपको उठते बैठते, चलते फिरते ईश्वर ही का ध्यान रहता था। आपकी यही शिक्षा सबके प्रति थी कि ईश्वरभजन किया करो, नमाज पढ़ो, जिससे परलोक में पहुँचकर मुक्ति के अधिकारी बन सको।

नर्क और स्वर्ग

(ले० — श्री मोहनलाल गुप्त)

दूसरे का दोष सुन, मुदित मन होते जो,
अपनी बुराई सुन, रोष जो जनाते हैं।
दूसरों को सुखी देख जलते जो रात दिन,
आड़ में बुराई, प्रकट बातें बनाते हैं॥
चुगली, चपाटी, अपवाद औ' विवाद में जो,
मांस औ' मदिरा में मौज नित उड़ाते हैं।
'मोहन' वे झूठे, हत्यार, दुराचारी, नीच,
पापी औ' पखंडी नर घोर नर्क पाते हैं॥
देश हित, लोक हित, धर्म हित मरते जो,
सत्य, धर्म, नेम, कर्तव्य निज पालते हैं।
सबके सहायक जो, सहते हैं सबही की,
सबमें सर्वत्र जो ईश को ही मानते हैं॥
हित अनहित में जो रहते हैं सदा सम,
सात्विक जो कर्म सद्भाव निज रखते हैं।
हिंसा मद क्रोध रहित होते हैं पंडित[1] जो,
हरिपद कमलों के, भृङ्ग स्वर्ग वे जाते हैं॥

१—पण्डित शब्द का भाव पण्डित (ब्राह्मण) नहीं है, किंतु—

मातृवत् परदारेषु परद्रव्येषु लोष्ठवत्।
आत्मवत् सर्वभूतेषु यः पश्यति स पण्डितः॥

जो पराई स्त्री में माता की, पराये धन में मिट्टी के ढेले की तथा संसार भर के प्राणियों में अपने पन की दृष्टि रखता है वह पण्डित है।

जैनधर्म और भजन

(ले० — श्री ऋषभकुमार)

भजन और प्रार्थनाओं का ऐसा व्यापक प्रचार है कि संसार के सभी धर्मों और संप्रदायों के कुछ न कुछ अपने भजन हैं ही। किसी धर्म में ईश्वर के भजन हैं, तो किसी में महापुरुषों तथा आदि प्रवर्तकों के गुणानुवाद के ही भजन हैं। सारांश, किसी न किसी रूप में सभी स्तुति, प्रार्थना और भजन करते हैं।

जैनमतावलम्बियों के यहाँ भी अनेक भजनादि प्रचलित हैं। कितने ही पाली में हैं तथा कितने ही संस्कृत में हैं। आज दिन बहुत से हिंदीभाषा में भी बन चुके हैं। भक्तामरस्तोत्र, जिनसहस्रनाम, सुप्रभातस्तोत्र, अद्याष्टक, महावीराष्टक आदि कितने ही बहुत प्रचलित हैं। हिंदी में भी अनेक स्तुतियाँ आदि प्रचलित हैं। समय के परिवर्तन के अनुसार, अब हिंदी के ही भजन अधिकांश जैनमतावलम्बियों में प्रचलित हैं। अतः यहाँ हम संस्कृत का 'महावीराष्टक स्तोत्र' और हिंदी की प्रातः तथा सायं स्तुति देते हैं।

महावीराष्टक स्तोत्र

(यह स्तोत्र प्राचीन कविवर श्री भागचन्द्र का बनाया हुआ है। भगवान् महावीर की वन्दना इसमें प्रधान है। इसके पद्यानुवाद करनेवाले श्री पं० बुद्धूलालजी हैं।)

यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्चिदचितः
समं भान्ति ध्रौव्यव्ययजनिलसंतोऽन्तरहिताः ॥
जगत्साक्षी मार्गप्रकटनपरो भानुरिव यो
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥ १ ॥

(चेतन अचेतन तत्त्व जेते, हैं अनंत जहान में
उत्पाद व्यय ध्रुवमय मुकुरवत्, लसत जाके ज्ञान में।
जो जगतदरशी जगत में सन्मार्गदर्शक रवि मनो
ते वीर स्वामीजी हमारे नयनपथगामी बनो ॥)

अताम्रं यच्चक्षुः कमलयुगलं स्पन्दरहितं
जनान्कोपापायं प्रकटयति वाभ्यन्तरमपि ॥
स्फुटं मूर्त्तिर्यस्य प्रशमितमयी वातिविमला
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥ २ ॥

(टिमिकार विन जुग कमललोचन, लालिमा तें रहित हैं
बाह्य अंतर की क्षमा को, भविजनों से कहत हैं।
अति परम पावन शांति मुद्रा, जासु तन उज्वल घनो
ते वीर स्वामीजी हमारे नयनपथगामी बनो ॥)
नमन्नाकेन्द्राली मुकुटमणिभाजालजटिलं
लसत्पादाम्भोजद्वयमिह यदीयं तनुभृतां ॥
भवज्वालाशान्त्यै प्रभवति जलं वा स्मृतमयी
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ३ ॥
(जिहि स्वर्गवासी विपुल सुरपति, नम्रतन है नमत हैं
तिन मुकुटमणि के प्रभामंडल, पद्मपद[१] में लसत हैं।
जिन मात्र सुमरनरूप जलसे, हनै भव आतप घनो
ते वीर स्वामीजी हमारे नयनपथगामी बनो ॥)
यदर्चाभावेन प्रमुदितमना दर्दुर इह
क्षणादासीत्स्वर्गी गुणगणसमृद्धः सुखनिधिः ॥
लभन्ते सद्भक्ताः शिवसुखसमाजं किमु तदा ?
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥ ४ ॥
(मन मुदित है मंडूक ने. प्रभुपूजवे मनशा करी
तत् छन लही सुख सपदा, बहु रिद्धि गुण निधि सों भरी।
जिहि भक्ति सों सद्भक्त जन लहँ, मुक्ति पुर कौ सुख घनो
ते वीर स्वामीजी हमारे नयनपथगामी बनो ॥)
तपस्स्वर्णाभासोऽप्यपगततनुर्ज्ञाननिवहो
विचित्रात्माप्येको नृपतिवरसिद्धार्थतनयः ॥
अजन्मापि श्रीमान् विगतभवरागोद्भुतगति-
र्महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥ ५ ॥

१ कमलरूपी चरणों में

(कंचन तपतवत् ज्ञाननिधि हैं, तदपि तनवर्जित रहैं
जो हैं अनेक तथापि इक, सिद्धार्थसुत भवरहित हैं।
जो वीतरागी गतिरहित हैं, तदपि अद्भुत गतिपनो
ते वीर स्वामीजो हमारे नयनपथगामी बनो ॥)
यदीया वाग्गङ्गा विविधनयकल्लोलविमला
बृहज्ज्ञानाम्भोभिर्जगति जनतां या स्नपयति ॥
इदानीमप्येषा बुधजनमरालैः परिचिता
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥ ६ ॥
(जिनको वचन मय अमल सुरसरि, विविधनय लहरैं धरैं
जो पूर्णज्ञान स्वरूप जल से, नहन भविजन को करैं।
तामें अजौं लगि घने पंडित, हंस ही सोहत मना
ते वीर स्वामीजी हमारे नयनपथगामी बनो ॥)
अनिर्वारोद्रेकस्त्रिभुवनजयी कामसुभटः
कुमारावस्थायामपि निजबलाद्येन विजितः ॥
स्फुरन्नित्यानन्दप्रशमपदराज्याय स जिनः
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥ ७ ॥
(जाने जगत् की जंतु जनिता, करी स्ववश तमाम है
है वेग जाको अमिट ऐसो, विकट अतिभट काम है।
ता को स्वबल से प्रौढ वय में, शांति शासन हित हनो
ते वीर स्वामीजी हमारे नयनपथगामी बनो ॥)
महामोहातङ्कप्रशमनपराकस्मिकभिषग्
निरापेक्षो बन्धुर्विदितमहिमामङ्गलकरः ॥
शरण्यः साधूनाम् भवभयभृतामुत्तमगुणो
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥ ८ ॥
(भयभीत भव हैं साधुजन को, शरण उत्तम गुण भरे
निःस्वार्थ के ही जगत बांधव, विदितयश मंगल करे।

जो मोहरूपी रोग हनिबे, वैद्यवर अद्भुत मनो
ते वीर स्वामीजी हमारे नयनपथगामी बनो ॥)

महावीराष्टकं स्तोत्रं भक्त्या भागेन्दुना कृतम् ।
यः पठेच्छृणुयाच्चापि स याति परमां गतिम् ॥

दोहा—महावीर अष्टक रच्यो, भागचंद रुचि ठान ।
पढ़ैं सुनैं जे भावसों, ते पावें निरबान ॥

प्रार्थना—भागचंद पंडित महा, कियो ग्रन्थ गंभीर ।
मैं मतिमितं[1] भाषा करी, शोधो सुधी सुधीर ॥

प्रातःकाल का स्तुति

वीतराग सर्वज्ञ हितंकर भविजन की अब पूरो आस ।
ज्ञानभानु का उदय करो मम मिथ्या तम का होय विनाश ॥ १ ॥
जीवों की हम करुणा पालें झूठ वचन नहिं कहैं कदा ।
परधन कबहूँ न हरहुँ स्वामी ब्रह्मचर्यव्रत रहें सदा ॥ २ ॥
तृष्णा लोभ बढ़ै न हमारा तोष सुधा नित पिया करें ।
श्री जिनधर्म हमारा प्यारा तिसकी सेवा किया करें ॥ ३ ॥
दूर भगावें बुरी रीतियाँ सुखद रीति का करें प्रचार ।
मेल मिलाप बढ़ावैं हम सब धर्मोन्नति का करें प्रचार ॥ ४ ॥
सुख दुख में हम समता धारैं रहें अचल जिमि सदा अटल ।
न्यायमार्ग को लेश न त्यागें वृद्धि करें निज आतमबल ॥ ५ ॥
अष्टकर्म जो दुख देते हैं तिनके क्षय का करें उपाय ।
नाम आपका जपैं निरन्तर विघ्नरोग सब ही टर जाय ॥ ६ ॥
आतम शुद्ध हमारा होवे पाप मैल नहिं चढ़े सदा ।
विद्या की हो उन्नति हममें धर्मज्ञान हूँ बढ़े सदा ॥ ७ ॥
हाथ जोड़कर शीस नवावें तुमको भविजन खड़े खड़े ।
यह सब पूरो आस हमारी चरण शरण में आन पड़े ॥ ८[2] ॥

१ मति माफिक २ । प्रारम्भ मे भी जैनप्रार्थनाएँ दी हुई हैं । उन्हें भी देखिए. —सं०

न व नी त

जिस प्रकार भारतवर्ष को संसार में सबसे अधिक भक्तों और भजनीकों के पैदा करने का श्रेय प्राप्त है उसी प्रकार भारतीय साहित्य भी भगवद्भजन से रँगा हुआ है। भारत की एक एक प्रान्तीय भाषाओं में जितने भजन मिलेंगे, उतने शायद किसी भी एक विशाल अभारतीय भाषा में नहीं मिल सकते। यों तो मुसलमान और ईसाइयों के यहाँ कुरान और बाइबिल जैसे धर्मग्रन्थ मौजूद हैं, जिनका बहुत अधिक महत्त्व है, पर हमारे यहाँ जिस प्रकार सामाजिक जीवन में भक्तों की बहुत संख्या रही है उसी प्रकार बहुसंख्यक साहित्यकार भक्त ही हुए हैं। इन भक्त कवियों और साहित्यकारों का स्थान भी कवि और कलाकार के रूप में सर्वोच्च रहा है। वाल्मीकि, व्यास, तुलसी, सूर, मीरा, कबीर, प्रेमानन्द आदि का उदाहरण प्रत्यक्ष ही है। इन लोगों के काव्य में कोरा ज्ञानोपदेश या चेतावनीमात्र नहीं है, बल्कि उनमें भावुक भक्तों का हृदय ही वर्ण वर्ण में अङ्कित है। वस्तुतः पूछा जाय, तो कवित्त्व की यही पराकाष्ठा है। यों तो कविता की परिभाषा को ही नहीं जा सकती; फिर भी इसका कुछ आभास पाने के लिए हम कविता को 'दो हृदयों की भाषा' मान सकते हैं। तात्पर्य यह कि कविता का जन्म भी हृदय के भावों से ही हुआ हो, वह केवल शब्दाडम्बरमात्र या मस्तिष्क की कसरत न हो; दूसरे वह पढ़ने या सुनने-वाले के भी हृदय को स्पर्श करे। इस कसौटी पर तो हमारे यहाँ के अधिकांश भजन ही कसे जा सकते हैं। अन्य कविताओं में तो प्रायः अलंकार और पिङ्गल का वह चक्कर रहता है कि जन्मदाता और उपभोक्ता दोनों को ही हृदय की ओर देखने का अवकाश नहीं मिल सकता, फिर काव्य में उसी हृदय को प्रतिबिम्बित करने और ढूँढ़ने की तो बात ही क्या है?

अब हम क्रम से एक एक काल के थोड़े बहुत भजन और स्तुतियाँ आप लोगों के समक्ष रखेंगे। आप स्वयं रसास्वादन करिए और देखिए की उनमें भक्ति, कवित्व और निश्छलता का कितना अनोखा संमिश्रण है।

वेद—

वैदिक काल सबसे पुराना माना जाता है। इसलिए हम पहले वेदों से ही प्रारम्भ करते हुए देखते हैं कि वेदों में तो उपासना और यजन आदि के ही मन्त्र भरे पड़े हैं। कहीं अग्नि और सूर्य की तथा कहीं इन्द्र, वरुण आदि अनेक देवताओं की वन्दनाएँ, प्रार्थनाएँ और स्तुतियाँ भरी पड़ी हैं। ऐसी दशा में कोई भी पाठक वेदों को उठाकर भजनों का एक विशाल ढेर देख सकता है और उनका स्वाध्याय करके सच्चा आनन्द प्राप्त कर सकता है। यहाँ उदाहरण देना कठिन है, अतः इस विषय पर एक छोटा सा स्वतन्त्र लेख किसी अङ्क में प्रकाशित किया जायगा। पाठक उसे आगे पढ़ेंगे।

उपनिषद् और श्रुति—

उपनिषद् वस्तुतः वेद का ही एक अङ्ग हैं। इन्हें वेदान्त कहते भी हैं। इनमें आत्मविद्या संबन्धी बातें भरी पड़ी हैं। ज्ञान विज्ञान के रहस्यों का जितना अधिक उद्‌घाटन इनमें हुआ है उतना और कहीं नहीं मिलता। आज भी यदि वेदान्तदर्शन का कोई अच्छा ज्ञाता बनना चाहता है, तो उसे उपनिषद् पढ़ना ही पड़ेगा। वस्तुतः भारत के बौद्धिक विकास के ये एक जीवित उदाहरण हैं, जिन्हें पढ़कर हमें आश्चर्य ही होता है कि क्या मनुष्य का मस्तिष्क इतना अधिक भी विचार सकता है!

इस आत्मविद्या के साथ ही अनेक उपनिषदों में देवताओं की वन्दनाएँ और प्रार्थनाएँ भी मिलती हैं। इन्हें हम समय समय पर निकले हुए हृदय के उद्‌गार कह सकते हैं। यहाँ उन्हीं में से कुछ देवताओं की एक आध वन्दनाएँ उद्‌धृत की जाती हैं। ये प्रार्थनाएँ बहुत प्राचीन काल से प्रचलित हैं। कुछ उपनिषदों में मिलती हैं तथा कुछ यों ही परंपरा से प्राप्त हैं, पर सभी श्रुतिरूप में हिंदूसमाज में मान्य हैं।

गणपतिवन्दना—

एकदन्तं चतुर्हस्तं पाशमङ्कुशधारिणम्।
अभयं वरदं हस्तैर्बिभ्राणं मूषकध्वजम्॥
रक्तं लम्बोदरं शूर्पकर्णकं रक्तवाससम्।
रक्तगन्धानुलिप्ताङ्गं रक्तपुष्पैः सुपूजितम्॥
भक्तानुकम्पिनं देवं जगत्कारणमच्युतम्।
आविर्भूतं च सृष्ट्यादौ प्रकृतेः पुरुषात्परम्॥
एवं ध्यायति यो नित्यं स योगी योगिनां वरः॥

(गणपत्युपनिषद्)

(एक दाँतवाले, चार हाथवाले, पाश और अङ्कुश धारण करनेवाले, अभयरूप, वर देनेवाले हाथों से शोभायमान, मूषक ध्वजावाले, रक्त वर्ण, लम्बोदर, शूर्पकर्णवाले, रक्त वस्त्रवाले, रक्त गन्ध से अनुलिप्त अङ्गवाले, रक्त पुष्पों से पूजित, भक्तों पर दया करनेवाले, देव, जगत् के कारण, अच्युत, निर्विकार, सृष्टि के आदि में आविर्भूत होनेवाले, प्रकृति और पुरुष से पर देव का जो नित्य ध्यान करता है वह योगी है, वह योगियों में श्रेष्ठ है।)

सद्‌गुरुवन्दना—

नित्यानन्दं परमसुखदं केवलं ज्ञानमूर्तिं
विश्वातीतं गगनसदृशं तत्त्वमस्यादिलक्ष्यम्।

एकं नित्यं विमलमचलं सर्वधीसाक्षिभूतं
भावातीतं त्रिगुणरहितं सद्गुरुं तं नमामि ॥

(शुकरहस्य)

(नित्य, आनन्दरूप, परम सुखदायक, केवल, ज्ञानमूर्ति, विश्व से अतीत, आकाशसम, 'तत्त्वमसि' आदि के लक्ष्य, एक, नित्य, निर्मल, अचल, सर्वबुद्धियों के साक्षीभूत, भावों से अतीत, तीनों गुणों से रहित, इन सद्गुरु (सच्चिदानन्द) को नमस्कार है ।)

देवीवन्दना—

हृत्पुण्डरीकमध्यस्थां प्रातःसूर्यसमप्रभाम् ।
पाशाङ्कुशधरां सौम्यां वरदाभयहस्तकाम् ॥
त्रिनेत्रां रक्तवसनां भक्तकामदुघां भजे ।
नमामि त्वामहं देवीं महाभयविनाशिनीम् ॥
महादुर्गप्रशमनीं महाकारुण्यरूपिणीम् ॥

(देव्युपनिषद्)

(हृदयकमल में स्थित, प्रातः सूर्य के समान प्रभावाली, पाश, अङ्कुश लिये हुए, वरद और अभय हाथवाली, तीन नेत्रवाली, रक्त वस्त्रवाली, भक्तों की कामधेनु को मैं भजता हूँ । आप महाभयनाशिनी, महादुर्गों को शान्त करनेवाली, महान् दयारूपिणी देवी को मैं नमस्कार करता हूँ ।)

सूर्यवन्दना—

नमो मित्राय भानवे मृत्योर्मा पाहि ।
भ्राजिष्णवे विश्वहेतवे नमः ॥
सूर्याद्भवन्ति भूतानि सूर्येण पालितानि तु ।
सूर्ये लयं प्राप्नुवन्ति यः सूर्यः सोऽहमेव च ॥

(सूर्योपनिषद्)

(नमस्कार है मित्र भानु के लिए । मृत्यु से हमारी रक्षा कीजिए । शोभायमान विश्व के हेतु के लिए नमस्कार है । सूर्य से भूत उत्पन्न होते हैं, सूर्य से पालन किये जाते हैं, सूर्य में लय होते है । जो सूर्य हैं, वही मैं हूँ ।)

शिववन्दना—

यो देवानां प्रभवश्चोद्भवश्च विश्वाधिपो रुद्रो महर्षिः ।
हिरण्यगर्भं जनयामास पूर्वं स नो बुद्ध्या शुभया संयुनक्तु ॥

(श्वेताश्वतरोपनिषद्)

(जो रुद्र देवताओं का उत्पन्न करनेवाला और ऐश्वर्य देनेवाला है, विश्व का अधिपति है, महर्षि है, जिसने पूर्व में हिरण्यगर्भ को उत्पन्न किया है वह हमको शुभ बुद्धि से युक्त करे।)

विष्णुवन्दना—

श्रीमन्नारायणो ज्योतिरात्मा नारायणः परः ।
नारायण परं ब्रह्म नारायण नमोऽस्तु ते ॥

(त्रिपादनारायण)

(श्रीमत् नारायण ज्योतिस्वरूप हैं, नारायण परमात्मा हैं, नारायण परब्रह्म हैं, हे नारायण ! आपको नमस्कार है।)

कृष्णवन्दना—

वेणुनादविनोदाय गोपालायाहिमर्दिने ।
कालिन्दीकूललोलाय लोलकुण्डलधारिणे ॥
बल्लकीवदनाम्भोजमालिने नृत्तशालिने ।
नमः प्रणतपालाय श्रीकृष्णाय नमो नमः ॥

(गो० पू० ता०)

(वेणु के नाद में विनोद माननेवाले, गोपाल, सर्प को नाथनेवाले, कालिन्दी के किनारे पर चलनेवाले, चञ्चल कुण्डल धारण करनेवाले, बल्लकी मुखवाले, कमलमाली नृत्तशाली के लिए नमस्कार है। प्रणतपाल श्री कृष्ण के लिए नमस्कार है, नमस्कार है।)

रामवन्दना—

नमो वेदादि रूपाय ॐ काराय नमो नमः ।
रमाधाराय रामाय श्रीरामायात्ममूर्तये ॥

(रा० पू० ता०)

(वेदादिरूप के लिए नमस्कार है, ॐकार के लिए नमस्कार है। लक्ष्मीधर के लिए, राम के लिए, आत्ममूर्ति श्री राम के लिए नमस्कार है।)

हरे राम हरे कृष्ण—

हरे राम हरे राम, राम राम हरे हरे।
हरे कृष्ण हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण हरे हरे ॥
इति षोडशकं नाम्ना कलिकल्मषनाशनम् ।
नातः परतरोपायः सर्ववेदेषु दृश्यते ॥

(कलिसंतरणोपनिषद्)

('हरे राम हरे राम, राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण हरे हरे' ये सोलह नाम कलि के पापों को नाश करनेवाले हैं। इनसे श्रेष्ठ अन्य उपाय वेदों में देखने में नहीं आता।)

गीता—

वेदान्त के सर्वस्व उपनिषदों के ही समान गीता का भी स्थान बड़े महत्त्व का है। यह समस्त इतिहास का नवनीत मानी जाती है। इसमें स्वयं भगवान् ने अर्जुन के बहाने से संसार को भक्ति, ज्ञान, योग आदि का उपदेश किया है। भगवान् के भजन के ऊपर भी इसमें बहुत कुछ लिखा है। वह सब इसी अङ्क में श्री गीतानन्दजी के 'प्रश्नोत्तर' * वाले अंश में लिखा है। पाठकगण उसे पढ़ सकते हैं। यहाँ तो हम केवल गीता में का प्रधान भजनभाग ही दे रहे हैं।

जिस समय भगवान् ने अर्जुन को अपना विश्वरूप दिखलाया, उस समय उसे विश्वास हुआ कि सचमुच उसके सखा और सारथी श्री कृष्णचन्द्र साधारण व्यक्ति नहीं हैं। वे स्वयं भगवान् हैं। समस्त चराचर के निवास हैं। इस भाव से प्रेरित होकर साधारण जीव की भाँति भक्तिपूर्ण हृदय से उसने जो भगवान् की स्तुति की है वह भजन का एक उत्कृष्ट नमूना है। कोई भी व्यक्ति उसी भजन का गान करके अर्जुन के ही समान भगवान् का प्रेमपात्र बन सकता है।

देखिए—भगवान् का विश्वरूप देखते समय अर्जुन भयाकुल हो उठा है और प्रार्थना कर रहा है—

त्वमक्षरं परमं वेदितव्यं त्वमस्य विश्वस्य परं निधानम् ।
त्वमव्ययः शाश्वतधर्मगोप्ता सनातनस्त्वं पुरुषो मतो मे ॥

—११।१८

× × ×

इसके बाद स्वयं भगवान् के मुख से उनके रूप को सुनकर अर्जुन बिल्कुल भयभीत हो उठता है और गद्गद् कण्ठ से प्रार्थना करने लगता है—

* देखिए पेज १५१९

कस्माच्च ते न नमेरन्महात्मन् गरीयसे ब्रह्मणोऽप्यादिकर्त्रे ।
अनन्त देवेश जगन्निवास त्वमक्षरं सदसत्तत्परं यत् ॥
त्वमादिदेवः पुरुषः पुराणस्त्वमस्य विश्वस्य परं निधानम् ।
वेत्तासि वेद्यं च परं च धाम त्वया ततं विश्वमनन्तरूप ॥
वायुर्यमोऽग्निर्वरुणः शशाङ्कः प्रजापतिस्त्वं प्रपितामहश्च ।
नमो नमस्तेऽस्तु सहस्रकृत्वः पुनश्च भूयोऽपि नमो नमस्ते ॥
नमः पुरस्तादथ पृष्ठतस्ते नमोऽस्तु ते सर्वत एव सर्व ।
अनन्तवीर्यामितविक्रमस्त्वं सर्वं समाप्नोषि ततोऽसि सर्वः ॥
सखेति मत्वा प्रसभं यदुक्तं हे कृष्ण हे यादव हे सखेति ।
अजानता महिमानं तवेदं मया प्रमादात्प्रणयेन वापि ॥
यच्चावहासार्थमसत्कृतोऽसि विहारशय्यासनभोजनेषु ।
एकोऽथवाप्यच्युत तत्समक्षं तत्क्षामये त्वामहमप्रमेयम् ॥
पितासि लोकस्य चराचरस्य त्वमस्य पूज्यश्च गुरुर्गरीयान् ।
न त्वत्समोऽस्त्यभ्यधिकः कुतोऽन्यो लोकत्रयेऽप्यप्रतिमप्रभाव ॥
तस्मात्प्रणम्य प्रणिधाय कायं प्रसादये त्वामहमीशमीड्यम् ।
पितेव पुत्रस्य सखेव सख्युः प्रियः प्रियायार्हसि देव सोढुम् ॥
अदृष्टपूर्वं हृषितोऽस्मि दृष्ट्वा भयेन च प्रव्यथितं मनो मे ।
तदेव मे दर्शय देव रूपं प्रसीद देवेश जगन्निवास ॥
किरीटिनं गदिनं चक्रहस्तमिच्छामि त्वां द्रष्टुमहं तथैव ।
तेनैव रूपेण चतुर्भुजेन सहस्रबाहो भव विश्वमूर्ते[1] ॥

—गी० ११।३७।४६

हिंदी—

हिंदीसाहित्य में भी अनेक भक्त कवि हुए हैं, लेकिन सबके भजनों का संग्रह करना और देना स्वल्पसमयसाध्य नहीं और न एक साधारण लेख में छापा ही जा सकता है। इसी से यहाँ हम केवल हिंदीसाहित्य के कुछ चुने हुए भक्त कवियों के थोड़े बहुत भजन देकर ही संतोष करेंगे। आशा है, हमारे पाठक भी गागर में ही सागर का आनन्दलाभ कर लेंगे।

१—गीता के पूरे ग्यारहवें अध्याय की व्याख्या आगामी अङ्क शेषाङ्क में देखिए।

राम राम रमु—

राम राम रमु, राम राम रटु, राम राम जपु जीहा।
रामनाम, नवनेह मेह को, मन! हठि होहि पपीहा ॥ १ ॥
सब साधनफल कूप सरित सर, सागर सलिल निरासा।
रामनाम रति स्वाति सुधा सुभ, सीकर प्रेमपियासा ॥ २ ॥
गरजि तरजि पाषान बरषि पवि, प्रीति परखि जिय जानै।
अधिक अधिक अनुराग उमँग उर, पर परमिति पहिचानै ॥ ३ ॥
रामनाम गति, रामनाम मति, रामनाम अनुरागी।
ह्वै गये, हैं, जे होहिंगे त्रिभुवन, तेइ गनियत बड़भागी ॥ ४ ॥
एक अंग मग अगम गवन कर, बिलमु न छिन छिन छाहैं।
'तुलसी' हित अपनो अपनी दिसि, निरुपधि, नेम निबाहैं ॥ ५ ॥

—तुलसीदास

× × ×

नाम का आधार—

है हरिनाम को आधार।
और या कलिकाल नाहिंन, रह्यो विधि ब्योहार ॥ १ ॥
नारदादि सुकादि संकर, कियो यहै विचार।
सकल स्रुति दधि मथत पायो, इतो यह घृतसार ॥ २ ॥
दसहु दिसि गुन करम रोक्यो, मीन को ज्यों जार।
'सूर' हरि के भजनबल ते मिटि गयो भवभार ॥ ३ ॥

—सूरदास

× × ×

रामगोविंदहरी—

भजो रे भैया रामगोविंदहरी।
जप तप साधन कछु नहिं लागत, खरचत नहिं गठरी ॥१॥
संतत संपत सुख के कारन, जासों भूल परी ॥२॥
कहत 'कबीरा' राम न जा मुख, ता मुख धूल भरी ॥३॥

—कबीरदास

(क्रमशः)

मुसलमानों और ईसाइयों में भक्ति भजन

(ले०—श्री देवीनारायण एडवोकेट, बी० ए०, एल०-एल० बी०, विद्यासागर (काशी), मुंशी [इलाहाबाद], बनारस)

(यवने ध्यानं जिनेऽहिंसा वैष्णवे भक्तिरुत्तमा । तांस्तुनैवोद्धरिष्यामि हिंसाशुचिविनिन्दकान् ॥)

मुसलमानधर्म

हमारे शास्त्रों में भी मुसलमानों के ध्यान की प्रशंसा की गई है। मुसलमानों में बड़े बड़े फकीर, भक्त और सूफी हो गये हैं। उनके भजन, जप, तप व्रतादि के नियम बहुत उच्च कोटि के हैं। चार कार्य उनके यहाँ फर्ज याने अत्यन्त आवश्यक हैं—(१) नमाज, (२) रोजा, (३) हज्ज और (४) जकात।

नमाज में मुसलमान लोग ध्यान, जप और खुदा (परमेश्वर) को याद करते हैं, परंतु किसी मूर्ति अथवा व्यक्ति का ध्यान नहीं करते। केवल निराकार खुदा का ध्यान करते हैं। परमात्मा के गुणों (वस्फों) द्वारा उसको याद करते हैं। मुसलमान मूर्तिपूजा के कट्टर विरोधी हैं, इसलिए मुसलमानधर्म में गीत गाना, तसवीर बनाना, गहना पहनना आदि शृङ्गार के कार्य नितान्त विरुद्ध माने गये हैं।

नमाज पाँच समय में पढ़ी जाती है जिनके नाम और समय निम्नलिखित हैं।

(१) फजर की प्रातःकाल को,
(२) जोहर—बारह बजे दिन को,
(३) तीन चार बजे शाम को,
(४) मग़रिब—सायंकाल को,
(५) एशा—आठ बजे रात को,

इसके अलावा भी और नमाजे है, परंतु वे विशेष विशेष समय और अवसर पर पढ़ी जाती हैं। नमाज मे निम्नलिखित कुरान की एक आयत अवश्य पढ़ी जाती है और इसके अतिरिक्त जो और आयतें हैं उन्हें जिसकी जब इच्छा हो समयानुसार पढ़ सकता है। नमाज खड़े होकर पढ़ी जाती है। शिया लोग हाथ खोलकर पढ़ते हैं और सुन्नी लोग हाथ बाँधकर। इसमें और भी सूक्ष्म भेद हैं जो स्थानाभाव से नहीं दिये जाते हैं। खड़े होने के बाद वे फिर झुकते हैं और बैठकर भगवान् का शिज्दा याने नमस्कार करते हैं, यह एक रेकत है। उक्त पाँचों नमाजों में कुल सत्रह रेकतें होती हैं।

कुरान की आयत—

जो नमाज में अवश्य पढ़ी जाती है—

बिस्मिल्ला अल रहमान अलरहीम।
अलहमदोलिल्लाहे रब्बुल आलमीन।
अल रहमान अल रहीम।
मालिके यौमिद्दीन।
याका ना वोदोव इयाका निस्त ईन।
यह देनस सेरातल मुस्तक़ीन।
सेरातल लज़ीना अन अंता आलेहिम।
जैरिल मगजूबे अलेहिम वलद
ज़ुआलीन॥ आमीन॥

अर्थ—आरम्भ करता हूँ अल्ला के नाम से जो कृपालु और दयालु है।

सब स्तुति उस परमात्मा की है जो पालनेवाला तमाम संसार का है।

वह बहुत मेहरबान और बड़ा रहम करनेवाला है। कयामत याने प्रलय के दिन का स्वामी है। हम लोग तुझी को पूजते हैं। और तुझी से मदद माँगते हैं।

हमको सीधा रास्ता दिखा। उन लोगों का रास्ता जिनपर तेरी बखशिस है, उन लोगों का रास्ता नहीं, जिनपर तेरा क्रोध है, और भटके हुओं का भी नहीं। ऐसा ही हो।

मुसलमानों में एक बात बड़ी विशेष है—संगठन और भ्रातृभाव। कुरान आदि धर्मग्रन्थों में आज्ञा है कि जहाँ तक हो सके बहुत से मुसलमान मिलकर एक साथ जमाअत में नमाज पढ़ें, उसमें ज्यादा फल होता है। और जुम्मा याने शुक्रवार के दिन और ईद आदि पर्वों पर ये लोग लाखों की तायदात में बड़े प्रेम, भक्ति और उत्साह के साथ नियत समय पर एक साथ नेमाज अदा करते हैं। इसके लिए बड़ी बड़ी विशाल मसजिदें बनी हुई हैं। सारे संसार में इनलोगों ने बड़ी बड़ी मसजिदें बनवाई हैं और वहाँ पादशाह से लेकर फकीर तक एक साथ, एक भाव से प्रेमपूर्वक मिलकर नमाज पढ़ते हैं। धर्म के साथ साथ संगठन का लक्ष्य मोहम्मद साहब ने आरम्भ ही से रखा। इसी से आज सारे संसार में चालीस करोड़ से अधिक मुसलमान हैं और सब पूर्णतया संगठित हैं।

रोजा भी मुसलमानधर्म का एक अत्यन्त आवश्यक कार्य है। मुसलमानों में बारह महीने होते हैं। जिसमें रमजान का एक महीना होता है। इसी महीने में रोजा रखा जाता है। यह बड़ा कठोर व्रत है। इसमें प्रातःकाल से लेकर सूर्यास्त तक कोई वस्तु ग्रहण नहीं की जाती। कठिन से कठिन गर्मी पड़े, पर पानी तक नहीं पी सकते। थूक तक भीतर घोंट नहीं सकते। इस व्रत में बहुत शान्ति, पवित्रता, अहिंसा, सत्यता ब्रह्मचर्य आदि नियमों के साथ रहना पड़ता है। कुरानशरीफ और हदीस का यही आदेश है और हर एक मुसलमान को इसका पालन करना फर्ज है। रमजान में कुरान का पाठ आवश्यक है। जिन मुसलमानों को कुरान कण्ठ होता है उन्हें 'हाफिज' कहते हैं।

हज्ज करना भी मुसलमानों के लिए फर्ज है। याने अपने जीवनकाल में कम से कम एक बार मक्का मदीना आदि स्थानों पर (जो अरब में हैं) जाना परम धर्म है। वह मुसलमान 'हाजी' कहलाता है, जो हज्ज कर आया है। उस हाजी साहब का बड़ा संमान होता है। शिया मुसलमान हज्ज के साथ साथ करबला भी अवश्य जाते हैं। करबला ईरान में है। यहीं मोहम्मद रसूल के नाती हजरत हुसैन मुसलमानों ही द्वारा मारे गये। इसी से शिया और सुन्नी का भेद भी मुसलमानों में पैदा हुआ जो अबतक है। उसका इतिहास बहुत बड़ा है और एक स्वतन्त्र विषय है, जो कि स्वतन्त्र लेख में आवश्यकता पड़ने पर लिखा जायगा।

जकात—जो आमदनी मुसलमान को हो उसमें से चालीसवाँ हिस्सा धर्म के कार्य में निकाल देना चाहिए। बड़े बड़े व्यापारी लोग लाखों रुपये जकात में निकालते हैं और इस्लाम की उन्नति में व्यय करते हैं; जैसे काशी (मदनपुरा) में ताजा वारिस के वंशज लाखों रुपये जकात निकालते हैं और इस काशी में नित्य प्रति इस्लाम की उत्तरोत्तर वृद्धि, पुष्टि और उन्नति करते जाते हैं, जिससे कि हम हिंदुओं का शिक्षा लेनी चाहिए।

मुसलमान लोग तन्त्र मन्त्र और माला द्वारा जप भी करते हैं। रात भर जागते हैं और जप करते हैं,

जिसको 'शब्बेदारी' कहते हैं। माला दो प्रकार की होती है। शिया लोगों की माला करबला की मिट्टी की होती है और सुन्नी लोगों की लकड़ी वगैरह अथवा और चीजों की; पर करबला की मिट्टी की नहीं। जप में कोई कलमा पढ़ता है, कोई और भी मन्त्र पढ़ते हैं।

कलमा—

ला इलाहा इललल्ला मोहम्मद रसूल उल्ला।

अर्थ—सिवा खुदा के कोई पूजने लायक नहीं है, मोहम्मद खुदा के भेजे हुए हैं।

एक आयत यूनिस की कुरान में है। लोग इसका भी जप माला पर ही करते हैं। जो अँधेरी कोठरी में बैठकर जप करते हैं उनका दुःख बहुत शीघ्र दूर हो जाता है, जैसे पैगंबर यूनियस का दुःख दूर हो गया था।

ला इलाहा इल्ला अंता सुजानका इन्नी कुंतो मिनज़ ज़ालमीन।

अर्थ—सिवाय तेरे कोई खुदा नहीं है और तू पाक है। मैंने अपने पर जुल्म किया है।

मुसलमानों मे कथा का विशेष प्रचार है—जिसको मौलूदशरीफ और मजलिश कहते हैं। इसमें एक विद्वान् मेंबर मञ्च पर बैठकर श्रोतागण को इस्लाम-धर्मविषयक कथाएँ सुनाता है। मौलूदशरीफ में मोहम्मद साहब के जन्म की कथा कही जाती है और उनके गुणगान किये जाते हैं। शिया लोग बहुधा मजलिश में मोहम्मद साहब के दामाद हजरत अली और उनके पुत्र हजरत हसन हुसैन आदि के बध का वर्णन करते हैं और मोहम्मद साहब की एकमात्र पुत्री फातिमा बीबी और हजरत अली आदि के गुणों का भी वर्णन करते हैं। बड़ी बड़ी लड़ाइयों और वीरताओं का भी वर्णन आता है।

मजलिसों में बड़ी उत्तम उत्तम कविताएँ होती हैं। उर्दू के कवि अनीस की मजलिसें लखनऊ में मशहूर थीं। उनकी कुछ कविता नीचे दी जाती है।

"लेकिन जहाँ से आज गुजरना ही खूब है।
इज्जत पै बात आये तो मरना ही खूब है॥"
'गुरबत में कोई पूछनेवाला नहीं होता।
शमअ भी जलावो तो उजाला नहीं होता॥"
"गुस्ताख होके अर्ज किया है मोआफ हो।
हमने तो एक दिल भी न पाया जो साफ हो॥"
"ऐसे भी बहुत हैं जिन्हें मिलता नहीं दाना।
पीने को जो पानी हो तो मिलता नहीं खाना॥"
"भाई! है खुदा मालिक व मुखतार व तवाना।
कुछ एक साँ रहता नहीं दुनिया में जमाना॥"

ईसाईधर्म

इस समय ईसाईधर्म की सारे भूमण्डल में बड़ी उन्नति है। और ईसाई पादड़ी दुनिया के कोने कोने में ईसाईधर्म का प्रचार बड़े प्रेम और उत्साह से कर रहे हैं। करोड़ों रुपया इस कार्य में व्यय हो रहा है। ईसाई और मुसलमानधर्म में बहुत समानता है; जैसे हिदू और बौद्धों में है। ईसाई और मुसलमान किताबी कहलाते हैं याने ईसाई लोग बाइबिल को अपना प्रधान धर्मग्रन्थ मानते हैं और मुसलमान लोग कुरान को। ईसा और बाइबिल को भी मुसलमान मानते हैं, पर प्रधान रूप से नहीं मानते। मूर्तिपूजा के विरोध में दोनों एक हैं। हिदुओं को दोनों हेय समझते हैं। मुसलमान लोग हिंदुओं को काफिर कहते हैं और इसाई लोग हीदन (heathen याने-मूर्तिपूजक, जो सच्चे गॉड याने परमात्मा को नहीं मानते)।

ईसाई लोग ईसा (Lord Jesus Christ) को परमात्मा का प्यारा पुत्र मानते हैं। ईसा ने बड़े बड़े कष्ट उठाये और बड़ा सुधार किया, अन्त में यहूदियों ने उनको फाँसी के यन्त्र पर जिसे 'क्रास' (Cross) कहते हैं, लटका कर मार डाला। इसीलिए ईसाई लोग X क्रास के चिह्न को बड़ा पवित्र अ र पूजनीय मानते हैं। ईसाइयों का सिद्धान्त है कि जब ईसा ने कष्ट करके उपकार और धर्म के लिए शरीर त्याग दिया, तो हर एक ईसाई को कष्ट करके संसार में ईसाईधर्म का प्रचार करना चाहिए। ईसाइयों ने जंगल पहाड़ों में, दूर दूर भयंकर स्थानों पर भी जाकर अपने धर्म का प्रचार किया है, मुफ्त बाइबिलें बाँटी हैं, गिरजे बनवाये हैं, स्कूल, कालेज खोले हैं तथा गरीबों, असहायों, यतीमों, बच्चों और वृद्धों की सेवा की है। इस प्रकार हृदय पर प्रभाव डालकर गैर धर्मवालों को ईसाई बनाया और बराबर बनाते जाते हैं। भारत में भी कई करोड़ ईसाई हैं।

ईसाई लोग तीन बातों को बहुत मानते हैं—श्रद्धा विश्वास (Faith), आशा (Hope) और प्रेमभक्ति (Charity)। ईसाइयों में भी दो प्रधान भेद हैं (१) एक प्रोटेस्टेंट (Protestant) (२) दूसरा रोमन कैथोलिक (Roman Catholic)। इन दोनों मतों के अनुयायियों में बड़ा विरोध रहा है। और इस विरोध ने बड़े बड़े भीषण काण्ड किये हैं। इन दोनों मतों के गिरजे अलग अलग होते हैं। रोमन कैथोलिकधर्म के प्रधान पोप (Pope) हैं, जो इटली में रहते हैं और उन्हीं का हुक्म सारे संसार के रोमन कैथोलिक में चलता है। इंगलैंड अमेरिका आदि देशवासियों का मत प्रोटेस्टेंट है। वे लोग पोप को नहीं मानते। रोमन कैथोलिक लोग अपने गिरजों में ईसा और उनकी माता मेरी (Ava Maria) की मूर्ति अथवा तसवीर रखते हैं और पूजन करते हैं, पर प्रोटेस्टेंट लोग ऐसा नहीं करते। रोमन कैथोलिक लोग माला पर मन्त्रों का जप भी करते हैं। प्रोटेस्टेंट लोग केवल ईसा और बाइबिल को मानते हैं और किसी व्यक्ति अथवा ग्रन्थ को उस भाँति नहीं मानते।

ईसाई लोग गिरजा में जाते हैं और वहाँ प्रधान पादड़ी खड़े होकर बाइबिल और प्रार्थनाग्रन्थों में से भभगवान् को, जिनको वह गॉड (God) कहते हैं, स्तुति करते हैं। यह स्तुति सरविस (Service) कहलाती है। रविवार ईसाइयों में बहुत पवित्र दिन माना जाता है। उस दिन विशेष रूप से ईसाई एकट्ठे होकर गिरजा में बाइबिल आदि का पाठ करते हैं और धर्म आदि पर व्याख्यान सुनते हैं।

ईसाइयों में बाइबिल एक अपौरुषेय ग्रन्थ माना जाता है। उसमें से मैं कुछ भगवान् की स्तुति देता हूँ।

Psalm

Blessed is the man that walketh not in the counsel of the ungodly, nor standdeth in the way of sinners, nor sitteth in the seat of the scornful.

But his delight is in the law of the Lord; and in his law doth he meditate day and night.

(साम—वह मनुष्य सुखी है जो नास्तिकों की राय से नहीं कार्य करता, जो पापियों का साथ नहीं करता और जो घृणित मनुष्यों के पास नहीं बैठता। परंतु उसका आनन्द भगवान् के नियमों (याने बाइबिल) के पालन में है और उसी के ध्यान में वह दिन रात मग्न रहता है।)

Serve the Lord with fear, and rejoice with trembling.

(परमात्मा को डरते हुए भजो और काँपते हुए सुख मनाओ।।)

Hear me when I call, O God of my righteousness. Thou hast enlarged me when I was in distress ; have mercy upon me and hear my prayer.

(ऐ परमात्मा, जब मैं अपने धार्मिक विचारों को प्रकट करूँ तो सुनो। जब मैं विपत्ति में था तब तुमने मेरी रक्षा की है, मेरे ऊपर दया करो और मेरी प्रार्थना सुनो।)

Stand in awe, and sin not. Commune with your own heart upon your bed and be still. Selath.

(भगवान् का भय करो और पाप न करो। अपने बिस्तरे पर से उसका ध्यान भजन करो और शान्त रहो।)

ईसाइयों में अलग अलग धर्मप्रचारक संघ और संस्थाएँ हैं जिनको चर्च के नाम से पुकारते हैं जैसे-

(१) एंग्लिकन चर्च। (Anglican Church)

यह चर्च इंगलेंड का है। अंग्रेजों के राज्य का यही चर्च है। इंगलेंड के राजा और भारतसम्राट् इसी गिरजा में जाते हैं। वाइसराय गवरनर आदि भारत में इसी चर्च में प्रार्थना करते और उत्सवों पर जाते हैं। यह स्टेट चर्च (State Church) कहलाता है और इसके गिरजा सब स्थानों पर है। भारत में भारतसरकार इसके खर्च में भाग लेती है। बिशप (Bishop) आदि का वेतन भारतकोष से मिलता है।

(२) रोमन कैथोलिक चर्च (Roman Catholic)। यह पोप के आधीन है। यह स्टेट् चर्च नहीं है। आयरलैंड (Ireland) में रोमन कैथोलिक अधिक हैं।

(३) इसके अलावा ग्रीक चर्च, (Greek Church) मेथोडिस्ट चर्च (Methodist Church), कांग्रेगेशनलिस्ट चर्च (Congregationalist Church) आदि भी हैं।

ईसाइयों के गिरजे भी बड़े विशाल विशाल होते हैं जिसमें लोग हजारों लाखों की तायदात में एक साथ प्रार्थना कर सकें और आपस में प्रेम और भ्रातृभाव (Love and fratern ty) का प्रचार हो। इनके यहाँ गिरजों में स्त्रियाँ भी जाती हैं और प्रभु की प्रार्थना में संमिलित रहती हैं।

ईसाई मठों को मोनैस्टरी (Monastery) और साधुओं को मौंक (Monk) कहते हैं। ईसाइयों में स्त्रियाँ भी साधुनी होती हैं जो कि नंस (Nuns) कहलाती हैं। वे ननरी (Nunnery) में रहती हैं और अपना जीवन ब्रह्मचर्य, तपस्या, भजन, भक्ति, उपासना और सेवा में बिताती हैं। ❀

❀ इस लेख में उर्दू या फार्सी के शब्दों पर गीताधर्म के नियमानुसार नुक्ता नहीं दिया गया है। इसके लिए लेखक उत्तरदायी नहीं। —सं०

विश्वधर्माङ्क की शब्दसूची

A

Atheism = नास्तिकता

Atheist = नास्तिक

Anti-religious = धर्मविरोधी

Achievement = कृति

Action = कर्म

Anger = क्रोध

Avarice = लोभ

Ascetic = साधु, फकीर

Adaptation to environment = युगानुरूपता, युगानुसरिता, जैसा देश वैसा भेष

Act = कानून, कायदा, ला

Action = क्रिया, कर्म

Activity = कार्य

B

Belief = विश्वास

Beautiful = सुन्दर

C

Catholicity = विचारों की उदारता

Conviction = विश्वास, प्रतीति, धारणा

Crisis = संक्रान्ति, विषम

Constitution = विधान

Civility = सुशीलता, शिष्टता

Civilisation = सभ्यता

Civilised = सभ्य

Civil = सुशील

Consciosness = साक्षात्कार, संज्ञा

D

Devotion = भक्ति

Desire = काम, इच्छा

Deism = ईश्वरकर्तृत्ववाद

Dogma = सांप्रदायिकमत

Doctrine = मत

E

Ethics = नीतिशास्त्र, कर्तव्यशिक्षा

Edition=संपादन

Experience = अनुभव

F

Fate = भाग्य

Forgiveness = क्षमा

G

Gift = दान, देन

God = ईश्वर, देवता

Goddess = देवी

Golden means = मध्यम मार्ग, मज्झिम पथ

Golden rule of criticism = आत्मौपम्य का उदार नियम, आलोचना का स्वर्ण नियम

Good = अच्छा, श्रेय

H

Harmlessness = अहिंसा

Henotheism = सर्वेश्वर वाद

I

Irreligious = अधार्मिक

Idol = मूर्ति

Idolatry = मूर्तिपूजा

Impression = संस्कार

Instinct = सहज संस्कार, सहज प्रकृति

Impulse = वेग अथवा आवेग

K

Knowledge = ज्ञान

L

Love = प्रेम

Love of God = ईश्वरभक्ति, भगवद्भजन

Law = कानून, नियम, कायदा

M

Meditation = ध्यान

Monotheism = एकेश्वरवाद, एकदेववाद

Myth = पुराण, कथा

Morals = सदाचार और नीति

Meliorism = युद्धवाद, प्रयत्नवाद

Mythology = पुराणविज्ञान, कथाविज्ञान

N

Non-Conformation = पुराणप्रतिवाद, कर्मकाण्डविरोध

O

Orthodox = (धार्मिक विचारो मे) कट्टर

Optimism = विजयवाद

P

Parliament of Religions = सर्वधर्मपरिषद्

Prayer = प्रार्थना

Polytheism = अनेकेश्वरवाद, बहुदेववाद

Pilgrim = तीर्थयात्री

Pilgrimage = तीर्थयात्रा

Preaching, = उपदेश, प्रचार

Priest = पुरोहित

Providence = अदृष्ट

Pity = दया

Psycho-analysis = मनोविश्लेषण

Policy = नीति

Pleasant = प्रिय, सुहावना

Psychological analysis = मनोवैज्ञानिक विश्लेषण

Pessimism = पराजयवाद

R

Religion = धर्म, मजहब

Religious = धार्मिक

Righteousness = शील, धार्मिकता

Rule = नियम

S.

Salvation = मोक्ष

Sect = संप्रदाय

Sage = ऋषि

Saint = संत

School = संप्रदाय

Sweet = मधुर, रुचिकर, मीठा

Suffering = दुःख, बौद्धों का दुःखवाद

Stoicism = स्टोक मत,

T.

Theism = आस्तिकता, ईश्वरविश्वास

Theology = धर्मशास्त्र, धर्मविज्ञान

Temple = मन्दिर

Truth = सत्य

Tolerant = सहिष्णु, समदर्शी

Toleration = एकदृष्टि, समदर्शन

Teacher = गुरु

W.

Worship = पूजा

Work = काम

ऐसे शब्दों का तो एक कोष बन सकता है। हमें इन शब्दों की दिन रात जरूरत भी पड़ती है। अभी हिंदी में कोई ऐसा कोष है भी नहीं; पर इस अङ्क में इसकी कोई विशेष उपयोगिता नही, इसी से अधिक शब्द नहीं दिये हैं। हम विश्वधर्माङ्क मे लिख चुके थे, इसलिए यह छोटी-सूची दे दी है जिससे कुछ पाठक अवश्य लाभ उठावेंगे। सं०—

विश्वधर्माङ्क के चित्रों का परिचय

१—गणेशजी (मुख पृष्ठ पर) ।

हिंदुओं के यहाँ प्रत्येक शुभ कार्य के प्रारम्भ मे गणेशजी का पूजन अथवा स्मरण किया जाता है। ये सब विघ्न बाधाओं को दूर करनेवाले है । ये धर्म के अध्यक्ष भी है, अतः गीताधर्म के विश्वधर्माङ्क के प्रारम्भ मे इनके चित्र का होना आवश्यक है ।

यह गणेशजी के बालरूप का बड़ा सुन्दर चित्र है। बालस्वभाव और बाललीला इस चित्र से फूट फूटकर निकल रही हैं। गणेशजी की मोदकप्रियता का अङ्कन चित्रकार ने बड़े ही सुन्दर ढंग से किया है। एक हाथ के लड्डू को वे खा रहे है, दो हाथों मे एक एक लड्डू लिये हुए है तथा चौथा हाथ लड्डू माँगने के लिए बढ़ा रहे है। हाथी को कमल का फूल बहुत प्रिय लगता है। यहाँ पर हाथी का चेहरा धारण करनेवाले गजानन के कान पर खोसा हुआ कमल का फूल एक अद्वितीय शोभा रखता है ।

२—भगवान् वेदव्यास (पृष्ठ १०७२) ।

यह वेदव्यासजी का उस समय का चित्र है जब वे पुराणों की रचना में लगे थे। वेदव्यासजी पुराणों की रचना करके उनको लिखवाने के लिए प्रस्तुत थे, किंतु कोई शक्तिशाली लेखक न मिलता था। अन्त मे बहुत कहने सुनने पर गणेशजी लिखने के लिए तैयार हुए थे। इस चित्र में वेदव्यासजी बोलते हुए तथा गणेशजी लिखते हुए दिखाये गये हैं।

३—कृष्णस्तु भगवान् स्वयम् (पृष्ठ १०८०) ।

वसुदेव और देवकी के संमुख कृष्णजी अपने विष्णुरूप से उपस्थित हैं। घोर कष्टों से पीड़ित वसुदेव और देवकी के यहाँ कारागार में जन्म लेते ही श्री कृष्णजी ने उन्हें अपना शङ्खचक्रगदापद्मधारी रूप दिखा दिया है जिससे वे निर्भय हो जाय और उनके मन से सारी शङ्काएँ दूर हो जायँ। वसुदेव और देवकी अकस्मात् अपने पुत्र को इस रूप मे देखकर आश्चर्य में पड़ गये हैं और चुपचाप हाथ जोड़े हुए बैठे है ।

४—राधाकृष्ण (पृष्ठ ११४०) ।

प्राकृतिक सौन्दर्य के बीच, इस चित्र में राधा और कृष्ण की अद्भुत झाँकी दिखाई देती है। वर्षा हो रही है। एक सुरम्य वनस्थली में कदम्बों के झुरमुट के नीचे एक पर्दे के भीतर कृष्णजी राधिकाजी को छिपाये हुए है तथा आप भी उसी मे छिपे हुए है। देखने मे तो यह चित्र शृङ्गारिक जान पड़ता है, किंतु इसमें गूढ आध्यात्मिक व्यञ्जना छिपी हुई है। यह नामरूपात्मक सारी सृष्टि माया का पर्दा है जिसके भीतर प्रकृति और पुरुष साथ साथ छिपे हुए हैं। भगवान् कृष्ण पुरुषरूप है जो राधारूपिणी अपनी शक्ति को अपने साथ साथ छिपाये रखते हैं। विश्व की मूलरूपिणी इस जुगुलजोड़ी की अनोखी छबि को देखकर वन्य पशु पक्षियों के सहित सारी वनस्थली खिलखिलाकर हँस पड़ी है। सभी इस झाँकी को देखकर मुग्ध हो गये है।

इस चित्र के संबन्ध में कुछ लोग आक्षेप करते हैं तथा इसे धर्मविरुद्ध समझते हैं। इसका निवारण विश्वधर्माङ्क (१०८७ पृष्ठ) में किया जा चुका है।

इस संबन्ध में व्रजभाषा के प्रसिद्ध कवि और कलाविद् राय कृष्णदासजी की कुछ पङ्क्तियाँ पढ़िए—

कारी घटा, रजनी मनों घोर,
करै घन सोर, अरन्य अछोर।
झंझा झकोर, बिजू चमकै,
थमकै नहिं नैकु, कुहूकत मोर॥
भंजित भीत श्री राधिका कों,
हरि कामरि में करि, लीन्ही अँकोर।

औचक यों चित चाही भई ,
इतहूँ रस की बरसात अथोर ॥

५—देवी सरस्वती का ध्यान (पृष्ठ ११८४)।

यह श्वेत रूपवाली, श्वेत कमल पर बैठी हुई, हाथों में वीणा, पुस्तक और माला धारण किये हुए देवी सरस्वतीजी का सुन्दर चित्र है। इसी रूप में उनका ध्यान करने से अविद्या का नाश होता है तथा सद्बुद्धि की वृद्धि होती है।

६—बाबा विश्वनाथ (पृष्ठ १२३८)।

यह भगवान् शंकर का बड़ा अच्छा चित्र है। इसमें भोला बाबा अपने भोले भाले रूप में दिखाये गये हैं। हालाहल पान करने से शंकरजी के कण्ठ में जो नीलिमा आ गई है उसका चित्रकार ने इस चित्र में अच्छा प्रदर्शन किया है। चित्रकार रामप्रसाद ने शंकरजी के जितने चित्र बनाये हैं उन सब चित्रों में यह सर्वश्रेष्ठ है। इतना सुन्दर और भावपूर्ण चित्र हमें कानपूर के प्रसिद्ध वैद्य श्री शिवनारायणजी से मिला है, इसके लिए उन्हे अनेक धन्यवाद।

७—रघुपति राघव राजाराम (पृष्ठ १२६४)।

श्री रामचन्द्रजी के इस सुन्दर चित्र में बड़ी मधुरता और स्वाभाविकता है। अपने ढंग का यह अनूठा चित्र है। भोलापन और गम्भीरता एक साथ श्री रामचन्द्रजी के चेहरे पर विद्यमान है।

८—जगत् के माता पिता (पृष्ठ १२७६)।

इस चित्र का परिचय विश्वधर्माङ्क में दिया जा चुका है।

९—श्री गोसाईं तुलसीदासजी (पृष्ठ १३३२)।

इस चित्र में श्री तुलसीदासजी एकान्त स्थान में वृक्ष के नीचे आसन पर बैठे हुए रामनाम के जप में लीन हैं। यह तुलसीदासजी का एकमात्र प्रामाणिक चित्र है। इस चित्र के हाशिये पर जैसी सुन्दर, सुरुचिपूर्ण और बारीक काम की सजावट है वैसी बहुत कम देखने में आती है।

१०—हृदयकमल में बालकृष्ण (पृष्ठ १३४०)।

भक्त के हृदयकमल में भगवान् का निवास रहता है। हृदय का स्वरूप कमल के समान माना जाता है। उसी कमल पर एक हाथ में माखन और एक हाथ में मिश्री लिये हुए भगवान् कृष्ण बालरूप में विराजमान हैं। कृष्णजी के स्वरूप में बालकों की मुद्रा का चित्रकार ने अच्छा अङ्कन किया है। हृदयकमल में कृष्णजी के बालरूप की कल्पना बड़ी ही सुन्दर है।

११—श्री लक्ष्मणजी (पृष्ठ १३८४)।

इस चित्र में बालोचित भोलेपन के साथ साथ लक्ष्मणजी की तेजस्विता टपक रही है।

१२—आदि जगद्गुरु श्री १०८ शंकराचार्यजी महाराज (पृष्ठ १४०८)।

जिस समय बौद्धधर्म की अधिकता और दुरुपयोग के कारण भारतवर्ष में नास्तिकता चरम सीमा को पहुँच चुकी थी उस समय श्री शंकराचार्यजी ने अपने वेदान्त के अनमोल उपदेशों का शङ्ख फूँककर इस नास्तिकता को दूर किया था। अनेक स्थानों पर शास्त्रार्थ करके उन्होंने नास्तिकों को परास्त किया था। उन्होंने ही दण्डी संन्यासियों के संप्रदाय का प्रवर्तन किया था। इस चित्र में शंकराचार्यजी अपने चारों प्रधान शिष्यों को उपदेश देते हुए दिखाये गये हैं। ये ही चार शिष्य पीछे दण्डियों की चार प्रधान गद्दियों के अधिकारी हुए।

१३—माँ गङ्गा का ध्यान (पृष्ठ १४२९)।

मकर पर सवार श्री गङ्गाजी का यह बड़ा सुन्दर चित्र है। वे मकर की पीठ पर एक कमल के फूल पर विराजमान् हैं। दो हाथों में एक एक कलश तथा दो हाथों में एक एक कमल का फूल लिये हैं।

१४—श्री हनुमान्जी (पृष्ठ १४५६)।

इस चित्र में श्री हनुमान्जी का परम वैष्णव रूप दिखलाया गया है। सीताजी का पता लगाने के बाद जब वे रामचन्द्रजी के पास लौटकर आये तब रामचन्द्रजी ने उनकी बड़ी प्रशंसा की। किंतु हनुमान्जी ने हाथ जोड़कर यही कहा कि—

"सो सब तव प्रताप रघुराई।
नाथ न कछू मोरि प्रभुताई ॥"

यही विनम्र भाव इस चित्र में दिखाया गया है। हनुमान्जी का ऐसा स्वाभाविक चित्र भक्तों का हृदय सहज ही अपनी ओर खींच लेता है।

समालोचना

(१) Kalyana Kalpataru, Sri Krishna Number (कल्याणकल्पतरु का श्री कृष्णाङ्क)-कल्याणकल्पतरु गीता प्रेस, गोरखपुर से अंगरेजी में निकलनेवाला धार्मिक मासिक पत्र है। यह श्री कृष्णाङ्क इसी पत्र का जनवरी १९३७ का विशेषाङ्क है। पृष्ठसंख्या २८० है। इसके संपादक सी० एल० गोस्वामी तथा कृष्णदासजी हैं। यह अङ्क बहुत से तिरंगे और सादे चित्रों से सुसज्जित है। भगवान् कृष्ण के संबन्ध में अच्छे अच्छे विद्वानों और महात्माओं के लेखों और विचारों का इसमें अच्छा संग्रह किया गया है। अंगरेजी पढ़े लिखे लोगों के लिए श्री कृष्णजी के जीवन और उनकी शिक्षाओं की जानकारी प्राप्त करने का यह विशेषाङ्क एक उत्तम साधन है। बिना जिल्द के इस अङ्क का मूल्य २॥) है तथा कपड़े की जिल्दसहित का ३) है। साढ़े चार रुपये देकर साल भर के लिए कल्याणकल्पतरु का ग्राहक बन जाने से यह विशेषाङ्क मुफ्त में मिल सकता है। मिलने का पता यह है—मैनेजर, कल्याणकल्पतरु, गोरखपुर।

(२) विनयपत्रिका (सटीक) — (काव्यग्रन्थ-रत्नमाला का छठाँ रत्न)। टीकाकार—श्रीयुत वियोगी हरि। प्रकाशक—साहित्यसेवासदन, काशी। इस पुस्तक के मिलने का भी यही पता है। पृष्ठसंख्या ६३४ है। छपाई साफ है। मूल्य बिना जिल्द २॥), जिल्दसहित ३) है।

गोस्वामी तुलसीदासजी की विनयपत्रिका की अब तक अनेक टीकाएँ निकल चुकी हैं और शायद अभी और भी निकलती रहेंगी। इसी से इस ग्रन्थ के महत्त्व का तथा साथ ही साथ इसकी जटिलता का भी पता लगता है। श्री वियोगी हरिजी की की हुई इस 'हरितोषिणी' टीका से विनय की जटिलता को सुलझाने में बहुत सहायता मिल सकती है। पहले मूल पद, फिर शब्दार्थ, फिर भावार्थ और तत्पश्चात् टिप्पणी देने का क्रम रखा गया है। टीकाकार ने भाव को स्पष्ट करने के लिए आवश्यकतानुसार संस्कृत के श्लोक तथा अन्तर्कथाएँ भी दे दी हैं। हमारे विचार से टीका बड़ी सुन्दर हुई है, रखने योग्य है।

(३) भ्रमरगीतसार—(काव्यग्रन्थमाला का आठवाँ रत्न)। संपादक—पं० रामचन्द्र शुक्ल। प्रकाशक-साहित्यसेवासदन, बुलानाला, काशी। पृष्ठसंख्या १४८, कागज अच्छा और छपाई साफ है। मूल्य १) है।

इस पुस्तक में सूरदास के भ्रमरगीत संबन्धी चुने हुए पद हैं। पुस्तक के प्रारम्भ में सूरदासजी के संबन्ध में ७६ पन्नों का नोट है जिसमें उनकी कविता के संबन्ध में बहुत सी बातों का समावेश है। पुस्तक संग्रहणीय है। ऐसे संग्रह किसी के भी पुस्तकालय की शोभा बढ़ा देते हैं।

(४) भावना—(काव्यग्रन्थमाला का १२ वाँ रत्न)। इस गद्य काव्य के लेखक-श्री वियोगी हरि हैं। प्रकाशक-साहित्यसेवासदन, काशी। पृष्ठसंख्या ६३, छपाई साफ है। मूल्य ॥=) है।

श्री वियोगी हरिजी हिंदी के प्रतिभाशाली लेखक और कवि हैं। उनकी लेखनी से निकले हुए गद्य काव्यों का यह संग्रह पढ़ने योग्य है।

(५) दानलीला—(वैष्णवग्रन्थमाला का प्रथम रत्न)। लेखक—श्री हरिहररायजी। प्रकाशक—साहित्य-सेवासदन, काशी। पृष्ठसंख्या ४४। छपाई अच्छी है। मूल्य बिना जिल्द का ।-), जिल्द सहित का ॥) है।

श्री हरिहररायजी का नाम यद्यपि व्रजभाषा के कवियों में अभी तक प्रसिद्ध नहीं हो सका है, किंतु उनकी रचनाएँ सरस हुई हैं। व्रजभाषा काव्य की प्रस्तुत पुस्तक में उन्होंने दानलीला का अच्छा वर्णन किया है।

(६) भ्रमरगीत—(महात्मा नन्ददासजी कृत)। संपादक—व्रजरत्नदास। प्रकाशक—साहित्यसेवासदन, बनारस सिटी। पृष्ठसंख्या १६। मूल्य ≡) मात्र।

व्रजभाषा काव्य में नन्ददासकृत भ्रमरगीत का एक विशेष स्थान है। इस पुस्तिका में आवश्यकतानुसार संपादक ने फुटनोट भी दे दिये हैं।

(७) रामराज्य—लेखक—सर श्री प्रभाशंकर दलपतरामजी पट्टणी के० सी० आई० ई०। अनुवादक—कुमारी शकुन्तला विशारद। प्रकाशक—जयन्तीलाल मोरारजी मेहता। संपादक—'देशीराज्य' नडियाद। पृष्ठसंख्या ३१ है।

यह पुस्तिका प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ सर प्रभाशंकरजी पट्टणी के रामराज्य संबन्धी गुजराती के लेख का हिंदी अनुवाद है। इसमें मूललेखक ने रामचन्द्रजी के चरित्र पर विचार करते हुए उनके राज्य की विशेषताओं को दिखाने का अच्छा प्रयत्न किया है।

(८) रामकृष्ण परमहंस—(शताब्दी जयन्ती स्मृति)। प्रकाशक—स्वामी सत्यानन्द, श्री रामकृष्ण मिशन होम आफ सर्विस, लक्सा, बनारस सिटी। पृष्ठसंख्या ३२०। मूल्य ॥≡) मात्र। मिलने का पता मन्त्री, श्री रामकृष्णसेवाश्रम, लक्सा, बनारस सिटी।

इस पुस्तक का प्रकाशन श्री स्वामी रामकृष्ण परमहंस की गत मार्च के महीने में मनाई जानेवाली शताब्दी जयन्ती की स्मृति में किया गया है। इसमें रामकृष्णजी के संबन्ध में अनेक समाचारपत्रों एवं देशी विदेशी विद्वानों और महात्माओं के मतों का, उनके जीवनचरित्र का, उनके वचनामृत का तथा जयन्ती के अवसर पर काशी में मनाये जानेवाले उत्सव में विभिन्न विद्वानों और संतों के द्वारा दिये गये अभिभाषणों का संग्रह है। श्री रामकृष्ण परमहंस पर श्रद्धा रखनेवालों के लिए यह पुस्तक रखने के योग्य है। असल में हम तो चाहते हैं कि इस ग्रन्थ के लेख सभी पाठक पढ़ें। बड़े पवित्र और सुन्दर लेख हैं।

(९) योगप्रदीप—लेखक—श्री अरविन्द। प्रकाशक—श्री मदनगोपाल गाडोदिया, श्री अरविन्द ग्रन्थमाला ४, हेयर स्ट्रीट, कलकत्ता। भाषान्तरकार—श्री लक्ष्मणनारायण गर्दे। पृष्ठसंख्या ६५। कागज अच्छा, छपाई साफ और सुन्दर है। मूल्य ॥) है।

श्री अरविन्द घोष के पत्रों में से कुछ का इस पुस्तक में संग्रह है। इनसे इस विषय पर प्रकाश पड़ता है कि योग क्या है और किस प्रकार उसका साधन करना चाहिए। अध्यात्मविद्या के विद्यार्थियों के लिए यह बड़े काम की चीज है। अरविन्दजी के जीवन के संबन्ध में भी इस पुस्तक से बहुत कुछ जानकारी प्राप्त हो सकती है। अरविन्द का नाम ही क़ाफी है, अधिक क्या लिखें?

(१०) धन की उत्पत्ति—लेखक—दयाशंकर दुबे एम० ए०, एल-एल० बी० और भगवान्दास केला। प्रकाशक—रामनारायण लाल पब्लिशर और बुकसेलर, इलाहाबाद। पृष्ठसंख्या २७६। मूल्य १।)

अर्थशास्त्र के उत्पत्ति संबन्धी (Production) अंग पर विद्वान् लेखकों ने इस पुस्तक में अच्छा विवेचन किया है।

भारत के कुछ भक्त

(ले०—स्वामी श्री रवीन्द्रानन्दजी महाराज, घंटाकोठी, कनखल, हरिद्वार)

भारतभूमि सदा से भक्तों की खान रही है। संसार के बड़े बड़े भक्त इसी भूमि में जन्मे और पले। यहाँ का जल वायु भक्ति और ज्ञान के उन महत्तत्त्वों से ओतप्रोत है कि इसकी धूलि में खेलकर बढ़नेवाले अवश्य ही एक न एक आत्मज्ञान की चिनगारी पा गये हैं। यही कारण है कि सारे भूमण्डल में भक्तों को सर्वाधिक संख्या में पैदा करने का जो श्रेय भारतमही को प्राप्त है वह किसी भी दूसरे को नहीं मिल सका। आज भी इस प्रकार के भक्तों से माँ भारत की गोद सूनी नहीं है। गुरुवर गीताव्यास स्वामी विद्यानन्दजी महाराज वर्तमान युग में भी भक्ति का प्रभाव दिखा रहे हैं। प्रभु किस प्रकार उनके गीताप्रचार, गीतासंमेलन और गीताधर्म आदि को बढ़ा रहा है! यह प्रभु की भक्ति का ही प्रभाव है। मैं तो भक्तों का भक्त हूँ। इसी से अपने पाठकों और बराबरी के भक्तों को दूसरे संतों और भक्तों की कथा सुनाकर उनकी भक्ति किया करता हूँ।

इस प्रकार के भक्तों के चरित बड़े ही रोचक और शिक्षाप्रद होते हैं। उनका रहन सहन, खान पान आदि सभी साधारण लौकिक जनों से भिन्न होता है। जहाँ सांसारिक मनुष्य अपनी इहलोक की उन्नति में व्यस्त रहता है, वहीं भक्त का लक्ष्य 'पर' की ओर रहता है। वह परमात्मा और परलोक की तरफ देखता है। पर सत्य के अनुसंधान में सचेष्ट रहता है। ऐसी हालत में उसके कार्य और व्यवहार भी हमसे भिन्न और हमारे लिए अलौकिक तथा आकर्षक होते हैं। नई बातों को जानने के लिए मनुष्य की रुचि सहज ही होती है।

ऐसी दशा में यदि हम अपने पाठकों के समक्ष कतिपय श्रेष्ठ भक्तों की चरितगाथा उपस्थित करें, तो वह अवश्यमेव रोचक होगी। इसी विचार से हम यहाँ कुछ ऐतिहासिक भक्तों की कथा संक्षेप में देंगे। आधुनिक और पौराणिक भक्तों का वर्णन छोड़कर हम केवल ऐतिहासिक तथा अधिकांश में मध्य काल के भक्तों का ही वर्णन देंगे। पुराणों की गाथा में प्रायः लोग कपोलकल्पना का दोषारोपण कर सकते है तथा अर्वाचीनों की पूरी जानकारी न प्राप्त हो सकने के कारण वर्णन में त्रुटि आ सकती है; फिर एक स्थान पर सबका वर्णन संभव भी नहीं। इसी विचार से इन दोनों कोटि के भक्तों का वर्णन प्रस्तुत लेख में नहीं किया जायगा।

इस लेख में एक बात यह भी हमारे पाठकों के ध्यान देने की है कि सभी भक्तों के साथ भजनाङ्क की संगति बैठाने के लिए उनके भजनीकत्व का भी वर्णन आ जाय, इसका वृथा प्रयास नहीं किया जायगा। भक्तों के जीवन में भजन तो उनकी दिनचर्या में ही शामिल रहता है। कोई राम का गुणानुवाद गाता है, तो कोई कृष्ण का। कोई 'शिव शिव' भजता है, तो कोई 'नारायण नारायण'। किसी के आराध्य सगुण ईश्वर हैं, तो किसी के निर्गुण ब्रह्म। अतः पाठकों को यह समझ लेना चाहिए कि 'भजन' तो सभी भक्तों के जीवनपथ का सबसे बड़ा संबल रहा है। एक बात और है। वह यह कि लेख में भक्ति में नई धारा के प्रवर्तक आचार्यों का भी वर्णन दे दिया गया है। वे लोग आचार्य थे। लोगों का ध्यान पहले उनके आचार्यत्व की ही ओर जाता है। उनके साधनमय भक्त जीवन की ओर लोग कम देखते हैं। पर वस्तुतः देखा जाय, तो मालूम होगा

कि वे लोग आचार्य होने के साथ ही भक्त भी बड़े ऊँचे दर्जे के थे। अतः इनकी जीवनी भी अपना महत्त्व रखती है। हाँ, मुसलमान भक्तों का वर्णन इसमें छोड़ दिया गया है[1], क्योंकि लेख के बहुत बढ़ जाने की संभावना थी।

अब अकारादि क्रम से भक्तों की जीवनी दी जाती है। संभव है बहुत से भक्तों की जीवनी प्रमाद या अज्ञानवश छूट भी जाय। अतः आशा है, पाठकगण उसके लिए हमें क्षमा करेंगे।

(१) एकनाथ

पैठण (प्रतिष्ठान) के प्रसिद्ध महाराष्ट्र ऋग्वेदी ब्राह्मणपरिवार में उनका जन्म शाके १४५५ के लगभग हुआ था। इनके पिता का नाम सूर्यनारायण और माता का नाम रुक्मिणी बाई था।

जन्म होने के कुछ ही समय बाद इनके माता पिता का देहान्त हो गया। इस मातापिताविहीन बालक के लालन पालन और शिक्षा दीक्षा का भार इनके पितामह चक्रपाणि पर आ पड़ा। पितामह और पितामही ने इनका उचित रीति से पालन पोषण किया। बालक एकनाथ अत्यन्त कुशाग्र बुद्धि थे।

एकनाथ को किसी योग्य गुरु की चिन्ता थी। अन्त में एक दिन आकाशवाणी हुई कि देवगढ़ में पं० जनार्दन पंत के पास जाओ, वे तुम्हारी सब आशाएँ पूरी कर देंगे।

बालक एकनाथ की अवस्था इस समय बारह वर्ष की थी। एक दिन बिना किसी से कहे सुने, तड़के उठकर वे देवगढ़ की ओर चल दिये और गुरु जनार्दन पंत के चरणों में उन्होंने अपने को अर्पण कर दिया। पंतजी की कृपा से इन्हें सिद्धि मिली और भगवान् से साक्षात्कार भी हो गया। इसके पश्चात् ये गुरु की आज्ञा से तीर्थयात्रा को निकले।

तीर्थयात्रा से लौटने पर गुरु की आज्ञा से एकनाथ का विवाह पैठण के निकट बीजापुर ग्राम के एक संभ्रान्त कुल की कन्या गिरिजा बाई के साथ हो गया।

यात्रा के समय आपने भागवत और रामायण पर विस्तारसहित ग्रन्थ लिखे थे। चतुःश्लोकी भागवत, हस्तामलक टीका, शुकाष्टक टीका, स्वात्मबोध, चिरंजीवपद, आनन्दलहरी, अनुभवानन्द, मुद्राविलास, लघुगीता, भजनीभारुड़, रुक्मिणीस्वयंबर, भागवत, भावार्थ रामायण, रामकृष्णलहरी, उद्धवगीता आदि अनेकों ग्रन्थों की रचना का श्रेय आप ही को है।

अपने पुत्र श्री हरि पण्डित से इनका विचार भिन्न था, इसी से हरि पण्डित काशी चले गये और बहुत समझाने पर अपने पिता के यहाँ गये।

पैठण में एक स्त्री रहती थी उसका संकल्प एक हजार ब्राह्मणों को भोजन कराने का था। कालगति से थोड़े ही दिन बाद उसका पति मर गया। वह वैभवशाली स्त्री कंगाल हो गई, पर अपने संकल्प को पूरा करने का निश्चय कर उसने विलक्षण पण्डित से उपाय पूछा। उन्होंने उससे कहा कि यदि तुम एकनाथजी को खिला दोगी, तो तुम्हारा संकल्प पूरा हो जायगा। इसपर उसने एकनाथजी को निमन्त्रित किया। श्री हरि पण्डित भोजन बनाने को भेजे गये। एकनाथजी के भोजन कर चुकने पर इन्होंने श्री हरि पण्डित को पत्तल फेंकने को कहा। हरि पण्डित पत्तल उठाने लगे, तो उन्हें मालूम हुआ कि एक के बाद दूसरा—इस प्रकार पूरे एक हजार पत्तल थे। इस प्रकार की अनगिनत कथाएँ आपके विषय में प्रचलित हैं। (क्रमशः)

[1] १–मुसलमान भक्तों की जीवनी इसी अङ्क में अन्यत्र प्रकाशित है। पाठक उसे पढ़ सकते हैं। सं०—

गीताधर्म

(सचित्र, धार्मिक और विशेषाङ्कमय मासिकपत्र)

'गीताधर्म' आज लगभग साल भर से आप लोगों की जो सेवा कर रहा है, वह आपसे छिपी नहीं है। इसपर लोकसंग्रही महात्मा विद्यानन्दजी की छाया है। साथ ही उनका आशीर्वाद और हमारे कृपालु ग्राहकों की कृपा भी है, फिर यह क्यों न निरन्तर फलता, फूलता और सेवा करता रहे ?

आप यदि इसके ग्राहक नहीं हैं, तो आज ही ग्राहक बनिए; और यदि आप इसके ग्राहक हैं, तो कम से कम दो दो ग्राहक और बढ़ाइए। यदि आप इसके ग्राहक बढ़ाते हैं तो आपको प्रभु स्वयं बढ़ायेंगे— यही हमारे स्वामीजी का आशीर्वाद है। यह पत्र धर्म का सेवक है, भक्ति और ज्ञान के संदेश से भरा रहता है। इसका कोई भी पृष्ठ खोलिए, आपको स्वाध्याय की, रस की सामग्री अवश्य मिलेगी। इसमें भगवान् के आकर्षक और रंग विरंगे चित्रों का भी दर्शन आपको अवश्य ही मिलेगा। इसमें प्रकाशित भजनों को गुनगुनाकर आप आत्मिक सुख भी पायेंगे और प्रभु के गुणों का गान भी करेंगे। हिंदी के साथ साथ इसमें गुजराती की भी प्रचुर सामग्री आपको पढ़ने के लिए मिलेगी। वस्तुतः ऐसे पत्र का पढ़ना और दूसरों को पढ़ने के लिए प्रेरित करना धर्म की, भगवान् की, सेवा करना है। अपने गुरु का आशीर्वाद भी ग्रहण करना है। फिर इसमें महात्माओं के उपदेश, भक्तों के भजन और विद्वानों के लेख भी आपको मिलेंगे। बिना प्रयास इस प्रकार परमार्थ और स्वार्थ की सिद्धि और कहाँ हो सकती है ? आज ही हमारी प्रार्थना पर विचार करके उसे कार्यरूप में परिणत करने के लिए कमर कस लीजिए। इसके विशाल विशेषाङ्क '**विश्वधर्माङ्क**' में आपको ऊपर लिखी सभी बातें प्रचुर मात्रा में मिलेंगी। क्या हम अब भी समझें कि आप हमारी प्रार्थना पर ध्यान न देंगे ?

निवेदक—

वार्षिक चंदा ४) रु०

व्यवस्थापक, गीताधर्म कार्यालय,
साक्षीविनायक, काशी।

श्री रामचरितमानस

❀ गोस्वामी तुलसीदास की रामायण की सबसे शुद्ध और प्रामाणिक प्रति ❀

इसकी कुछ निजी विशेषताएँ हैं—

इतना शुद्ध पाठ अब तक की प्रकाशित अन्य किसी भी रामायण में नहीं है।
इसके संपादक हैं—रामायण के आचार्य पं० विजयानन्द त्रिपाठी।
भारती भंडार, काशी ने इसे प्रकाशित किया है।
इसमें विशद विषयसूची, विचारपूर्ण वक्तव्य, अनुसंधानमय कविजीवनी और पाठान्तर भी संमिलित हैं।
नयनाभिराम छपाई और आकर्षक चित्रों से युक्त हिंदी के इस सर्वश्रेष्ठ सजिल्द काव्यग्रन्थ का

जिस भदैनी में रामचरितमानस की रचना हुई थी } **मूल्य ४) रु० मात्र है** { उसी भदैनी में रामचरितमानस संपादित हुआ है।

प्राप्तिस्थान—गीताधर्म बुकडिपो, साक्षीविनायक, काशी।

गीताधर्म में समालोचना

गीताधर्म में प्रतिमास उत्तमोत्तम साहित्यिक, धार्मिक तथा अन्य विषयक पुस्तकों की आलोचना की जाती है। कुछ पुस्तकों का परिचय तथा प्राप्तिस्वीकार मात्र भी दिया जाता है। ये सब परिचय तथा आलोचनाएँ कुछ विशेष नियमों से दी जाती हैं। यथा—

१. पुस्तक की केवल एक प्रति प्राप्त होने से हम साधारण परिचय और प्राप्ति-स्वीकार मात्र देते हैं।

२. दो प्रति प्राप्त होने पर किसी भी पुस्तक की निष्पक्ष और सम्यक् समालोचना की जाती है। प्रत्येक विषय की पुस्तकों पर केवल उसके अधिकारी व्यक्ति ही लिखते हैं।

(उपर्युक्त दोनों प्रकार की आलोचनाओं के लिए पुस्तकें संपादक—'गीताधर्म' के नाम आनी चाहिएँ।)

३. यदि किसी को किसी पुस्तक की विशद और उसके प्रत्येक पहलुओं पर प्रकाश डालनेवाली समालोचना करानी हो तो उसके लिए हम लोगों ने विशेष प्रबन्ध कर रखा है। काशी की प्रसिद्ध संस्था तुलसी मीमांसा परिषद् के अन्तर्गत एक समालोचक समिति है। उसका कार्य किसी भी पुस्तक को लेकर पहले उसका पूर्ण अध्ययन करना है। तदनन्तर वे लोग जो निष्पक्ष समालोचना लिखते हैं, वह प्रदर्शनी नामक छमाही पत्रिका में प्रकाशित की जाती हैं। इस पत्रिका का मुख्य उद्देश्य पुस्तकालोचन ही है। इस प्रकार की समालोचना के लिए निम्न पते पर किसी भी पुस्तक की दो प्रति आनी आवश्यक हैं—

श्री मन्त्री, तुलसी ममींसा परिषद्, गीताधर्म कार्यालय, काशी।

अतः यदि आप लोग हिंदी, संस्कृत, गुजराती, अंग्रेजी, बँगला, उर्दू, मराठी आदि भाषाओं की किसी भी पुस्तक की निष्पक्ष आलोचना और ग्रन्थ का एक नये क्षेत्र में प्रचार चाहते हैं तो ऊपर लिखी बातों पर ध्यान देकर गीताधर्म जैसी संस्था के पास अपनी पुस्तकें अवश्य भेजिए।

संपादक—गीताधर्म,

गीताधर्म कार्यालय, काशी।

Gita Dharma Registered No. A 2843.

हरिद्वार में आगामी कुम्भ पर
अखिल भारतवर्षीय गीतासंमेलन
का दूसरा अधिवेशन होगा

सभी साधु महात्माओं, गीताप्रेमियों और विद्वानों से प्रार्थना है कि वे अभी से अपने विचारों और कार्यों द्वारा हमारी सहायता करें।

मन्त्री—

गीतासंमेलन

गीताधर्म कार्यालय

काशी।

× × × ×

१. 'गीताधर्म' पढ़िए।

धर्म और साहित्य दोनों का रस मिलेगा।

२. स्वामीजी का संदेश है

"आप गीताधर्म के ग्राहक बढ़ाइए। आपको प्रभु बढ़ायँगे।"

गीताव्यास स्वामी विद्यानन्दजी आजकल घंटाकोठी कनखल में है

श्री पद्मनारायण आचार्य एम० ए० द्वारा गीताधर्म प्रेस, साक्षीविनायक, काशी में मुद्रित, संपादित और प्रकाशित